मासिक समाचार पत्र

लोकविद्या पंचायत

● सूचना युग में बराबरी के विचार के पुनर्निर्माण का पत्र ●
● लोकविद्याधर समाज के पुनर्संगठन का वैचारिक आधार पत्र ●
● पूँजी आधारित समाज के स्थान पर ज्ञान आधारित समाज के निर्माण का विचार पत्र ●

वर्ष 1, अंक 5, कुल पृष्ठ : 8 | 5 सितम्बर 2011 | सहयोग राशि : 5 रुपये

वर्धा में किसानों के बढ़ते कदम

गिरीश सहस्त्रबुद्धे, नागपुर

गत 9 अगस्त 2011 क्रांति दिवस पर प्रहार किसान मित्र शेतकरी संघटना की ओर से वर्धा में किसानों की एक सभा का आयोजन किया गया था। कृषि उत्पाद बाजार समिति के प्रांगण में लगभग पन्द्रह हजार किसान बरसती वर्षा में सभा में उपस्थित थे।

महाराष्ट्र में अमरावती जिले के निर्दलीय विधायक श्री बच्चू कडू वर्धा में किसानों की सभा में

प्रहार संघटना के संस्थापक अमरावती जिले के निर्दलीय विधायक श्री बच्चू कडू हैं, जो सदन में किसान की आवाज निरंतर बुलंद किए हुए हैं और अमरावती जिले में प्रायोजित बिजली प्रकल्पों के लिए किए जाने वाले किसानों से भूमि अधिग्रहण के सवाल को लेकर अनूठे तथा प्रभावशाली आंदोलन खड़े करते रहे हैं।

प्रस्तुत सभा का आयोजन 23 सितम्बर 2011 को अमरावती में हो रहे किसान सम्मेलन की तैयारी के चलते किया गया था। ऐसी सभाएं कई स्थानों पर की जा रही हैं। वर्धा की सभा की सबसे अधिक दिलचस्प बात यह है कि सभा में बहुत बड़ी संख्या में ग्रामीण युवक शामिल थे। इस बात का उल्लेख सभी वक्ताओं ने भी किया। यह कहा गया कि शिक्षा पर होने वाला भारी खर्च और इसके बाद भी नौकरी मिलने के बारे में अनिश्चितता के कारण अब गांवों का नौजवान आंदोलन में कूद चुका है। सभा को प्रहार संघटना के प्रमुख कार्यकर्ताओं सहित श्री चन्द्रकान्त वानखेडे, भारतीय किसान यूनियन के नेता तथा अंतर्राष्ट्रीय किसान आंदोलन व्हाया कैम्पेसिना के दक्षिण एशिया समन्वयक श्री युद्धवीर सिंह, शेतकरी संघटना के पूर्व अध्यक्ष और अखिल भारतीय किसान समन्वय समिति के पूर्व समन्वयक श्री विजय जावंधिया और श्री बच्चू कडू ने सम्बोधित किया।

सभी वक्ताओं ने अपने भाषणों में फिर एक बार संगठित होकर संघर्ष करने की बात पर जोर दिया। श्री चन्द्रकान्त वानखेडे ने कहा कि आज तक लगभग ढाई लाख किसान आत्महत्या कर चुके हैं। न सिर्फ सरकार ने इस मामले में कुछ नहीं किया, बल्कि आत्महत्याओं के मुद्दे पर वह झूठ पर झूठ बिखेरे जाती है और कुछ नेता तो यह कहने से भी बाज नहीं आते कि किसान आत्महत्या तो पारिवारिक कारणों से या सरकारी मुआवजे के लालच में करते हैं। श्री युद्धवीर सिंह ने बताया कि किस तरह संगठन की ताकत के जरिए श्री महेन्द्र सिंह टिकैत को गिरफ्तार करने के लिए बड़ी संख्या में भेजे गये पुलिस कर्मियों को किसानों ने खदेड़ भगया। उन्होंने कहा कि भारतीय किसान यूनियन महाराष्ट्र के किसानों के संघर्ष में उनके साथ है। श्री विजय जावंधिया ने अपने भाषण में सारे राजनैतिक दलों पर उनकी किसान विरोधी नीतियों के लिए हल्ला बोला। उन्होंने बताया कि किस तरह कृषि उत्पाद से सम्बन्धित आयात और निर्यात नीति के कपट से किसान को मिलने वाले दामों को गिराए रखा जाता है। आन्ध्र प्रदेश के दक्षिण गोदावरी जिले के किसानों द्वारा धान बुआई के क्षेत्र में 40 प्रतिशत घटौती करने के निर्णय का स्वागत करते हुए उन्होंने पूछा कि कैसा रहेगा अगर सारे देश का अनाज पैदा करने वाला किसान अनाज पैदा न करने का निर्णय ले ले। सरकार को चाहिए कि इस बात पर गंभीरता से विचार करे। श्री बच्चू कडू ने कहा कि अब आत्महत्या नहीं संघर्ष करना है, इस संघर्ष में अब नौजवान बड़ी संख्या में शामिल होंगे। उन्होंने कहा कि विजय जावंधिया जैसे ईमानदार और आंदोलन का अनुभव रखने वाले नेता रास्ता बताएं। हम उनके मार्गदर्शन में लड़ेंगे। 23 सितम्बर को अमरावती में होने वाले सम्मेलन में बड़ी संख्या में शामिल होने का आवाहन उन्होंने किया।

सभा के बाद सभी किसानों ने जिलाधिकारी कार्यालय तक रैली निकाली और जिलाधिकारी महोदय को अपनी मांगों का निवेदन दिया। जब तक सिंचाई की व्यवस्था नहीं की जा सकती तब तक असिंचित खेती के लिए प्रति वर्ष प्रति एकड़ 10 हजार रुपये का अनुदान देने की मांग की गई। सभी प्रकल्पग्रस्तों को तुरन्त सरकारी नौकरी या 25 लाख रुपये सरकार दे। अगर किसी भी प्रकल्प के लिए जमीन का अधिग्रहण किया जाता है तो किसान को दिया जाने वाला मुआवजा बाजार में उस जमीन की जो कीमत हो उसके छः गुना हो, यह मांग की गयी। सभी किसानों की जमीनों पर बुआई से कटाई तक के सभी कामों को उसी प्रकार महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारण्टी योजना में शामिल किया जाए जैसा कि राष्ट्रीय फलोद्यान योजना के कामों के बारे में किया गया है। यह मांग भी की गई कि डॉ. नरेन्द्र जाधव समिति और डॉ. स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों को लागू किया जाए।

•

शासन द्वारा पुणे के किसानों की हत्या

के. सुरेन्द्रन, पुणे

अगस्त क्रांति के दिन महाराष्ट्र की पुलिस ने अपनी जमीनों और पानी की लूट के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे किसानों पर मुम्बई-पुणे राष्ट्रीय मार्ग पर खुलेआम दौड़ा-दौड़ा कर गोली चलाई, जिसमें 3 किसानों की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई। मारे गये किसान श्रीमती कान्ताबाई ठक्कर (ग्राम येला से, 40 वर्ष), श्याम तुपे (ग्राम सदावली, 27 वर्ष) और मोरेश्वर साठे (ग्राम शिबवाणे, 40 वर्ष) तीनों पुणे जिले के मावल तहसील के थे।

पुणे के पास पिंपरी-चिंचवड़ औद्योगिक क्षेत्र हैं यहां पानी देने के लिए पावना बांध से पानी लेने के लिए 35 किलोमीटर पाइप लाइन डालने की परियोजना 3 वर्ष पहले शुरू हुई। शुरू से ही विरोध था। मावल के किसान पिछले 40 साल में 'शहरी विकास' के लिए तीसरी बार अपनी जमीन खोने वाले थे। पहली बार 1971 में जब पावना बांध बनाया गया, दूसरी बार 1990 में जब मुम्बई-पुणे एक्सप्रेस वे बनाया और तीसरी बार 2008 में अपनी बची हुई जमीन और बांध के चलते उपलबध पानी छीनने की परियोजना से। इसलिए पहले वर्ष में केवल 4 किलोमीटर पाइप डाला जा सका और उसके बाद 2 साल के लिए काम बंद पड़ा रहा। लेकिन पिंपरी-चिंचवड़ नगर महापालिका ने (जिस पर राष्ट्रवादी कांग्रेस का कब्जा है) करोड़ों रुपये इस काम के लिए ठेकेदार को पेशगी दे दिये थे। इसलिए ठेकेदार पर दबाव था और जनता से बात किये बगैर मिट्टी खोदने और फेंकने की बड़ी-बड़ी मशीनें लाकर बाउर गांव में काम शुरू कर दिया गया। प्रतिरोध में लोगों ने 'मावल बंद' और 'रास्ता रोको' का आवाहन किया

पावना में किसानों का विरोध

जिसका नेतृत्व 9 अगस्त को एक सर्वदलीय समिति ने किया। बड़ी तादाद में लोग जमा हुए और मुम्बई-पुणे एक्सप्रेस वे पर बाउर गांव के पास रास्ता रोक दिया तथा सार्वजनिक सभा की। जैसे ही सभा खत्म होने आई स्थानीय नेताओं को पुलिस खींचकर ले जाने लगी। जनता ने विरोध किया और पुलिस नेताओं को जबर्दस्ती उठाने में असफल रही। इसके चलते पुलिस आक्रामक हो गई और जनता का सब्र भी टूट गया व पत्थर फेंकने जैसी घटनाएं भी हुईं। पुलिस ने जवाब दिया। कान्ता ठक्कर के सीने पर गोली लगी, श्याम तुपे की गरदन पर गोली लगी। मोरेश्वर साठे को पुलिस ने अपनी गाड़ी में ढकेला तो वह छुड़ाकर भागा जब उसे बेहद नजदीक से गरदन पर गोली मार दी गई। पुलिस हैवानियत पर उतर आई, दंगाइयों की तरह पास खड़े वाहनों को तक लाठियों से तोड़-फोड़ दिया।

राष्ट्रवादी कांग्रेस के गृहमंत्री आर. आर. पाटील ने पुलिस की कार्यवाही को उचित ठहराया। लेकिन विपक्ष के दबाव में कुछ छोटे पुलिस अधिकारियों को निलम्बित किया और एक उच्च न्यायालय के आवकाशप्राप्त न्यायाधीश को जांच सौंप दी। टेलिविजन के चैनलों पर खुलेआम यह दिखाया गया कि किस तरह पुलिस ने भागते लोगों पर पीछे से गोली चलाई और दौड़ा-दौड़ा कर मारा। महाराष्ट्र विधानसभा में पूरा सत्र हंगामेदार बना रहा। सरकार ने 23 अगस्त तक कुल 11 लाख रुपये की राहत की घोषणा की जिसमें से 2 लाख रुपये प्रति मारे गये व्यक्ति के परिवार को देने हैं।

(शुभा शमीम द्वारा अखिल भारतीय किसान सभा के ब्लाग पर डाली रिपोर्ट के आधार पर)

पंजाब में किसानों पर लाठी

पंजाब के मनसा जिले के कलक्टर के दफ्तर के सामने 26 अगस्त की सुबह धरनारत किसानों पर सोते समय ही पुलिस ने लाठियां बरसायीं। गोविन्दपुरा, सिरसीवाला, जलबेरा और बरेटा गांवों की 880 एकड़ जमीन एक 1320 मेगावाट का बिजलीघर बनाने के लिए जबर्दस्ती छीनी जा रही है। कई संगठनों द्वारा एक साझा प्रतिरोध 4 महीने से चल रहा है। मुआवजे की राजनीति और जबरन अधिग्रहण में फंसे किसान संघर्ष की राह पर हैं वे अगस्त 22 से विरोध प्रदर्शन के लिए एक साथ मनसा, जालंधर और अमृतसर में कलक्टर के दफ्तर के सामने धरने पर बैठे थे। मुख्यमंत्री ने 28 अगस्त को धरनारत किसानों को वार्ता के लिए बुलाया था जबकि किसानों ने 26 तारीख तक मसला हल करने की समय सीमा निर्धारित की थी और उसी दिन सुबह सरकार ने लाठी चार्ज करा दिया जिसमें कम-से-कम दो दर्जन किसान घायल हुए हैं।

•

इस अंक के बारे में

लोकविद्या पंचायत के पिछले अंकों में हमने अब तक बिजली का बराबर का बँटवारा हो, विस्थापन खत्म हो, स्थानीय बाजार को संरक्षण मिले, किसान विरोधी नीतियाँ खत्म हों, लोक विद्याधर समाज की वैश्विकस्तर पर एकता की जरूरत जैसे विषयों पर केन्द्रित सामग्री को स्थान दिया है। यह अंक लोकविद्या जीवन यापन कानून को बहस का मुद्दा बनाता है। यह एक ऐसा कानून बनाने की माँग है जिसके अन्तर्गत जिसे जो आता है उसके बलपर जीवनयापन का मौलिक कानूनी अधिकार उसे मिले और ऐसी स्थितियाँ बनाने के लिए सरकार को जिम्मेदार माना जाय। लोक विद्या के बल पर एक खुशहाल जीवन बनाया जा सके, इसके लिए संसाधन मुहैया कराना और बाजार की व्यवस्था करना सरकार के कर्तव्यों में हो।

•

लोकविद्या जन आंदोलन तैयारी

वाराणसी में विद्या आश्रम के परिसर पर 12-14 नवंबर को लोकविद्या जन आंदोलन का पहला अधिवेशन होने जा रहा है। इस अधिवेशन की तैयारी गतिविधियों का ब्यौरा हम लोकविद्या पंचायत के अंकों में प्रकाशित करते आ रहे हैं। पिछले नवंबर 2010 से इस अधिवेशन की तैयारी शुरू हुई और अब तक चार तैयारी बैठकें क्रमशः वाराणसी, हैदराबाद, इन्दौर और पुनः वाराणसी में हो चुकी हैं। इन तैयारी बैठकों के अलावा आंदोलन के विचार पर विजयवाड़ा, नागपुर, इन्दौर, वैशाली, पटना, हजारीबाग, देवघर, सिंगरौली, रीवां, शहडोल, उमरिया आदि स्थानों पर सभा और बैठकों का सिलसिला चला है और लोगों के विचारों को समाहित करने की प्रक्रिया चली है। (पृष्ठ 5 पर देखें)।

तीन दिवसीय इस अधिवेशन का पहला दिन लोकविद्या और लोकविद्या जन आंदोलन विचार पर रखा गया है। दूसरे दिन कार्यक्रम, संगठन एवं संघर्ष पर चर्चा होगी। तीसरे दिन लोकविद्या और कला, भाषा, मीडिया, साहित्य, सिनेमा पर वार्ता होगी। प्रत्येक दिन शाम को दिन भर हुई चर्चाओं पर मंथन व मनन का समय रखा गया है।

तीसरे दिन की चर्चा का आधार इस बात पर है कि अभी तक कला, साहित्य, भाषा, सिनेमा, मीडिया आदि ने लोकविद्या से बहुत कुछ लिया है। क्या अब यह समय आ गया है कि ये सब लोकविद्या के ही अंग बने तो सक्रियता का एक सैलाब बहने लगे?

'लोकविद्या पंचायत' इस सवाल पर विचार एवं सुझाव आमंत्रित करता है।

–संपादक

'लोकविद्या जीवनयापन अधिकार' कानून : एक वैचारिक मसौदा

बी. कृष्णराजुलु, हैदराबाद

पृष्ठभूमि : भारतीय समाज का वह विशाल हिस्सा जिसका जीवन और जीविका लोकविद्या पर आधारित है, उसे लोकविद्याधर समाज की संज्ञा दी गई है। इस समाज में अधिकांश छोटे व मध्यम किसान, कृषि मजदूर, कारीगर, आदिवासी, छोटे दुकानदार और घर-परिवार चलाने वाली महिलाएं आती हैं। यह लोकविद्याधर समाज एक ऐसी जिन्दगी जीने के लिए मजबूर है जिससे मौलिक मानवीय सम्मान पूरी तरह नदारद है। क्योंकि उनके (पारंपरिक) जीविकोपार्जन के तौर-तरीके टूट गए हैं। वे अपने को पूरी तरह 'बहिष्कृत' महसूस करते हैं। और जिन्दगी व भविष्य के बारे में सोच पाने में अपने को असमर्थ पाते हैं। अपने आत्मसम्मान और अस्मिता के हनन के चलते देशभर में लोकविद्याधर समाज के नौजवान संघर्ष के रास्ते अपनाते हैं और ये संघर्ष बहुत बार हिंसक भी हो जाते हैं। 1990 से शुरू हुए वैश्वीकरण के युग में वित्तीय सूचना गर्भित और औद्योगिक पूंजीवाद ने लोकविद्याधर समाज का शोषण जारी रखने के नए-नए उपाय और तरीके ढूंढे हैं। इसके चलते चारों ओर इस समाज के संघर्षों का नजारा दिखाई देता है। देशभर के किसान अपने उत्पादन के दाम के लिए, लागत में छूट और सहायता के लिए और अपनी जमीनें सरकारी-कारपोरेट गठबंधन द्वारा हड़पे जाने से बचाने के लिए संघर्षरत हैं। छोटे दुकानदार और व्यापारी, फुटकर धंधे में बड़े घरानों, इजारेदारों और अंतर्राष्ट्रीय कारपोरेशन की घुसपैठ के खिलाफ मोर्चेबन्दी कर रहे हैं। बुनकर धागे की आपूर्ति और बाजार में सुरक्षा की मांगों को लेकर संघर्षरत हैं। सभी किस्म के दस्तकार व कारीगर अपनी जीविका और बाजार को लेकर संघर्ष करते रहते हैं। वन संपदा के शोषण और लूट, खनिज संपदा के कारपोरेट कब्जे व बड़े-बड़े भू-भागों से खदेड़े जाने के चलते अपने जीवन और जीविका की बरबादी से त्रस्त आदिवासी बड़े पैमाने पर आंदोलन के रास्ते पर हैं। तेजी से बढ़ रही उपभोक्ता संस्कृति के चलते सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं में आ रही गिरावट के विरुद्ध 'संस्कृति' और 'अस्मिता' की रक्षा के आंदोलन भी इन्हीं संघर्षों की दुनिया के हिस्से के रूप में देखे जाने चाहिए। इनमें से कुछ आंदोलन क्षेत्रीयता, भाषा और स्वायत्तता की मांगों को लेकर इस उम्मीद में अलग राज्य बनाने की मांग तक पहुंच गए हैं कि समान स्थानीय पहचान पर आधारित राजनीति से आर्थिक व सामाजिक उत्थान के रास्ते खुल सकते हैं।

गैर-बराबरी और ग्रामीण गरीबी : गरीबी के मानक आय, भोजन की पौष्टिकता (कैलोरी में), मकान कैसा है, शिक्षा, स्वास्थ्य-सेवाओं तक पहुंच, स्वच्छ पर्यावरण और स्त्रियों व बच्चों के लिए सुविधाएं व व्यवस्थाएं, इन सब बातों से तय होते हैं। इस तरह बनाए गए मानक से आबादी के 80 फीसदी की पहचान गरीबों में होगी और इनमें से 90 फीसदी ग्रामीण गरीब होंगे। दूसरे शब्दों में लगभग सभी ग्रामजन (किसान, कारीगर, महिलाएं, मजदूर) और सभी आदिवासी भारत के गरीबों की श्रेणी में आते हैं। गरीबी दूर करने की चाभी लाभकारी रोजगार में मानी जाती है। यानि लाभकारी रोजगार का न होना प्रमुख रूप से गरीबी का कारण है। किसानों के लिए इसका मतलब है कृषि उत्पादन का अलाभकारी मूल्य और कृषि मजदूरों की कम मजदूरी। दस्तकारों और कारीगरों के लिए इसका अर्थ है हुनर पर आधारित उत्पादों के लिए बाजार न मिलना और उत्पादक कौशल को ढंग का काम न मिलना। आदिवासियों के लिए इसका अर्थ है 'काम करने की जगह' का घटता जाना और उनके द्वारा उत्पादित अथवा संकलित सामानों का बहुत ही कम दाम मिलना। महिलाओं के बीच

संक्षेप में

(1) लाभकारी रोजगार या नौकरी न होने के साथ और कृषि उत्पादन तथा जीविका आधारित सेवाओं का वाजिब मूल्य न मिलने के साथ गरीबी जुड़ी हुई है। ब्रिटिश राज में मजदूरी के लिए फायदेमंद रोजगार की अवधारणा तैयार हुई, ऐसी मजदूरी जो जिन्दगी की मौलिक आवश्यकताओं जैसे खाना, कपड़ा और सर के ऊपर छत की जरूरतें पूरी करें। लोकविद्या जीविका में जिन्दगी की इन बुनियादी जरूरतों को पूरा करने की शक्ति नहीं रह गई है।

(2) फायदेमंद रोजगार अब लगभग पूरी तरह 'आधुनिक' दक्षताओं और तौर-तरीकों को हासिल करने पर निर्भर है।

(3) लोकविद्या में परम्परागत जीविकोपार्जन का ज्ञान का आधार होता है।

(4) लोकविद्या को वैध ज्ञान का सामाजिक स्थान न देने और जीविकोपार्जन की दुनिया को नेस्तनाबूद करने में ही लोगों की आय टूटने और गैर-बराबरी तथा बढ़ती गरीबी का आधार है।

(5) शहरी - औद्योगिक - सूचनागत सेवाओं से जुड़े जीविकोपार्जन के तरीके और जीवन शैली को बढ़ावा देने की गतिविधियों का नतीजा जंगल काटने, भूमि अधिग्रहण करने, किसानों के लिए हानिकारक कृषि नीति बनाने और कारखानों में बनी सस्ती उपभोग की वस्तुओं की आयात नीति बनाने इत्यादि में होता है, जिन सबका प्रभाव पारंपरिक जीविकोपार्जन के नाश में ही होता है।

(6) जीवन, स्वतंत्रता और भोजन के अधिकार में जीविका का अधिकार निहित है।

यह मौलिक अधिकार एक ऐसे कानून का रूप ले सकता है जो लोकविद्या के आधार पर जीविकोपार्जन के अधिकार को सुनिश्चित करता हो और ऐसी व्यवस्थाओं को आकार देता हो, जो शब्द और भाव दोनों ही स्तरों पर इसे लागू कर सके तथा इसके लिए राज्य को वैसे ही जिम्मेदार बनाए जैसे 'जीवन' और 'स्वतंत्रता' के लिए किया गया है।

अपनी और अपने बच्चों की जिन्दगी बचाने के लिए सभी किस्म की कठिनाइयों से संघर्ष इसका रूप है।

अंग्रेजी राज के पहले भारतीय समाज और अर्थ व्यवस्था में खाना, कपड़ा, मकान और काम जैसी बुनियादी जरूरतें सभी की पहुंच में थीं। जबकि सामाजिक और आर्थिक गैर-बराबरी थी लेकिन वे अस्तित्व के लिए ही खतरा हो ऐसा नहीं था। किसी भी व्यक्ति का काम और समाज में स्थान लोकविद्या से परिभाषित होता था व तय होता था तथा सामाजिक व्यवस्था की आंतरिक गति टिके रहने और विकास करने की राह बनाती थी। ब्रिटिश शासन ने भोजन, काम और सामाजिक सुरक्षा की दृष्टि से स्थायित्व वाले समाज के बुनियादी घटकों को तहस-नहस करना शुरू कर दिया।

लोकविद्या जीवनयापन अधिकार : ग्रामीण समाज के विशाल हिस्से (लोकविद्याधर समाज) में एक बात समान है, वह यह कि जिसे वे सच्चे अर्थों में अपना होने का दावा कर सकते हैं और जो उनकी पकड़ में है, वह लोकविद्या है। उनकी जिन्दगी और जीवन

किसान किसानी से खुशहाल जिन्दगी बना सकें इसके लिए सरकार की ओर से बड़ी सकारात्मक पहल की जरूरत है।

यापन के तरीके मुख्य रूप से लोकविद्या पर आधारित होते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि लोकविद्या पर आधारित जीवनयापन को वैसा ही संवैधानिक वायदा लागू हो जैसा जीवन, स्वतंत्रता, स्कूली शिक्षा, सूचना, भोजन, शिक्षा में आरक्षण और रोजगार को लागू होता है। इसे एक मौलिक *लोकविद्या पर आधारित जीवनयापन अधिकार* का रूप लेना चाहिए, जिससे लोकविद्याधर समाज अपनी खोई हुई गति को वापस हासिल कर सके तथा इस समाज के पुरुष, स्त्री व बच्चे अपने जीवन का सम्मान के साथ पुनर्निर्माण कर सकें।

जीविकोपार्जन का अधिकार : मूलभूत मांगें

इस कानून के अंतर्गत

1. सरकार जिम्मेदार होगी यदि कोई भी व्यक्ति, पुरुष या स्त्री, असम्मानजनक जीवन जीने के लिए इसलिए मजबूर हो कि उसकी जीविका एक सम्मानजनक जीवन का आधार नहीं दे पाती है।
2. सरकार की जिम्मेदारी होगी कि वह लोकविद्या आधारित पेशों और रोजगारों को न्यायसंगत और स्थायित्व रखने वाले तरीकों से प्रोत्साहित करे।
3. वृद्धजनों व गर्भवती स्त्रियों को दी जाने वाली सुविधाओं तथा नरेगा जैसी रोजगार एवं अधिकारों के क्षेत्र का विस्तार किया जाय।
4. जो लोग वर्तमान योजनाओं के अंतर्गत नहीं आते हैं, ऐसे वृद्ध जनों, रोज सूश्रुशा के जरूरतमंद विकलांग, अपने गांव व समाज से दूर जाकर काम करने वाले मजदूरों और उनके परिवारों, बंधुआ मजदूरों व उनके परिवारों, बेघर लोगों और शहरी गरीबों के लिए नई सुविधाएं, व्यवस्थाएं दी जाए।
5. सरकारों को इस बात के लिए जिम्मेदार बनाया जाय कि वे विस्थापन और रोजगारों की हानि पर रोक लगाए।
6. वे व्यवस्थाएं हों, जो सरकारों को प्राकृतिक व मानवनिर्मित आपदाओं तथा अंदरुनी विस्थापन से नरेगा पर रोजगार के दिनों की सीमा हटाने जैसे कदम लेने के लिए सक्षम बनाए।
7. काम के मामलों में सामाजिक भेदभाव का अंत किया जाय, जिसमें अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, सर्वाधिक पिछड़ा वर्गों और अल्पसंख्यकों के प्रति भेदभाव शामिल है।
8. जीविकोपार्जन की नीति में निजी ठेकेदारों और कारपोरेशन की घुसपैठ से सुरक्षा की व्यवस्था हो। जहां हितों के टकराव हों वहां सरकार किसी साझेदारी में न जाए।
9. हिसाब लेने और जिम्मेदारियां तय करने के लिए ऐसी मजबूत और स्वतंत्र संस्थाओं की व्यवस्था हो जो शिकायतों को दूर करने, कानून तोड़ने के लिए अनिवार्य जुर्माना आदि तय करने और जिन्हें उनके अधिकार से वंचित किया गया है, उन्हें मुआवजे के फैसले निश्चित समय सीमाओं में दें। शिकायतों को दूर करने और जीविका संबंधित योजनाओं की देखरेख के प्रभावी अधिकार ग्रामसभा को होने चाहिए।
10. यह भी व्यवस्था होनी चाहिए कि न ऐसे कानून बनाए जाएंगे और न ऐसी नीतियां बनाई जाएंगी जो *जीविका के अधिकार* के माकूल माहौल पर विपरीत असर डालें।
11. सरकार की यह जिम्मेदारी होनी चाहिए कि वह जीविकोपार्जन के लिए आवश्यक जमीन, पानी, जंगल, चरागाह, रास्ते, बस्तियां और बिजली जैसे संसाधन और बुनियादी ढांचे की सुरक्षा करें, बनाएं और उपलब्ध करें।

●

लोकविद्या जीवनयापन कानून

ललित कुमार कौल, हैदराबाद

लोकविद्या जीवनयापन कानून को लागू करने की आवश्यकता क्यों है, इस सवाल पर कुछ विचार प्रकट करने का प्रयास इस लेख में किया गया है।

लोकविद्या एक ऐसी दुनियायी समझ है, जिसमें एक इंसान और उसका समाज अपने आपको प्रकृति का अभिन्न अंग मानता है। उसका प्रकृति से किसी भी प्रकार का विरोध नहीं, बल्कि उस जननी की गोद में पलते हुए वह अपने जीवन की समस्त आकांक्षाओं की पूर्ति की संभावना देखता है। यह नजरिया पश्चिमी नजरिए से एकदम

टेक्नोलॉजी और रोजमर्रे की वस्तुओं के आयात पर रोक लगनी चाहिए। कारीगरों के उत्पाद को बाजार की सुरक्षा अनिवार्य है।

अलग है जो प्रकृति और इसके संसाधनों को केवल निजी हित के इस्तेमाल के रूप में देखता है और ऐसी स्वार्थ पूर्ति के लिए प्रकृति के प्रति अत्यन्त हानिकारक साधनों का इस्तेमाल करने से हिचकिचाता नहीं।

भारतीय और पश्चिमी सभ्यता : किसी भी क्षेत्र की भाषा उसकी सभ्यता को एक प्रकार से दर्शाती है। यह तथ्य जितना दुनिया के किसी भी क्षेत्र के लिए संगत है, उतना ही भारत के विभिन्न क्षेत्रों के लिए है। क्योंकि अंग्रेजों ने भारतवासियों पर 200 से अधिक सालों तक हुकूमत की इसलिए अंग्रेजी भाषा और अन्य किसी भारतीय भाषा (जैसे हिन्दी) में अन्तर का एक छोटा-सा उदाहरण देना जायज है।

अंग्रेजी भाषा में 'राइट' शब्द है, जिसका अर्थ 'हक' है और 'सही' भी है। इसलिए अंग्रेजी भाषा में जब यह कहा जाए कि 'I am right in demanding my right' तो किसी भी नजरिए से माना गया 'हक' अपने आप में 'सही' भी हो जाता है और इसपर किसी दूसरे के फैसले या विरोध की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती। 'हक' और 'सही' के इस मेल में 'हक' ही 'हक' जारी रहा और 'सही' कहीं खो गया। परिवारों के टूटने का कारण यही 'हक' और 'सही' का अमिट मेल है क्योंकि यदि जीवन अपने ढंग से जीना मौलिक 'हक' था तो वही 'सही' भी था और इसपर कोई भी सामाजिक नियंत्रण लागू नहीं हो सकता था! समाजों के बिखरने का और दुनियाभर के शोषण का भी यही कारण है।

हिन्दी भाषा में 'हक' और 'सही' अलग-अलग शब्द हैं। इसलिए किसी का माना गया 'हक' 'सही' था या 'गलत' इसका निर्णय कोई दूसरा करने वाला था, जैसे कि परिवार के बड़े या गांव की पंचायत या फिर कोई न्यायसंगत संस्था। यही एक मूल कारण था कि संगठित परिवार वजूद में थे और सामाजिक नियंत्रणों को मान्यता प्राप्त थी। निजी सुविधा के लिए 'सही' को 'गलत' या 'गलत' को 'सही' प्रमाणित करने का 'हक' किसी को न था। जीवन अग्रसरता की यह मौलिक धारणा जीवन प्रगति और प्राकृतिक संसाधनों के इस्तेमाल से भी जुड़ी हुई थी।

यही कारण था कि सन् 1804 में लागू किए 'इंडियन फोरेस्ट एक्ट' से पहले भारत में वनों का शोषण नहीं हुआ था, जिसको देखकर अंग्रेजों की राय थी कि भारत के वासी वनों के इस्तेमाल से नावाकिफ थे। एक ऐसा भारत जहां *बड़े समुद्री जहाजों का, महलों का और अन्य इमारतों का* निर्माण हुआ करता था, *फिर भी जंगलों का शोषण नहीं हुआ था।* यह तथ्य अंग्रेजों की समझ के बाहर इसलिए था क्योंकि प्रकृति का बेरोक इस्तेमाल करना उनका 'हक' था और जो 'सही' भी था।

... शेष पृष्ठ 3 पर

लोकविद्या और नौकरी का सवाल

सुनील सहस्त्रबुद्धे, विद्या आश्रम, वाराणसी

देश के गरीबों की, जो स्कूल नहीं गये हैं उनकी, किसानों, कारीगरों, महिलाओं, आदिवासियों और पटरी पर धंधा करने वाले व छोटे-छोटे दुकानदारों की मौलिक मांग यह बनती है कि सरकार ऐसी व्यवस्थाएं बनाए जिनमें वे अपने ज्ञान के सहारे एक खुशहाल जिन्दगी जी सकते हों। यह मांग अभी तक उठी नहीं है क्योंकि ये सब गरीब लोग अन्य व्यावसायिक वर्गों की तरह खुशहाल जिन्दगी जीये इसकी कोई राजनीति नहीं है। लेकिन कोई भी सामाजिक क्रिया अथवा अवस्था किसी दूसरी क्रिया अथवा अवस्था पर पूरी तरह निर्भर नहीं होती है। अगर ऐसी मांग उठाई जाएगी तो वैसी राजनीति बनने के रास्ते भी खुल सकते हैं। लोकविद्या जन आंदोलन इन्हीं सब लोगों का यानि लोकविद्याधर समाज का ज्ञान आंदोलन है और यह कहता है कि लोकविद्या आधुनिक शिक्षा अथवा विज्ञान-प्रौद्योगिकी से किसी तरह कम दर्जे का ज्ञान नहीं है और इसके बल पर भी वैसी ही खुशहाल जिन्दगी बनाने की व्यवस्था होनी चाहिए जैसी आधुनिक शिक्षा के बल पर बनायी जाती है। यह कैसे हो सकता है? इसी के लिए लोकविद्या जीवनयापन अधिकार की बात की जा रही है।

जल, जंगल और जमीन की लड़ाई लोकविद्याधर समाज की अपनी जिन्दगी बचाने की लड़ाई है। बाजार से बेदखली के खिलाफ चल रहे संघर्ष अपनी जिन्दगी बचाने के संघर्ष है। परिवारों के उजाड़ और दो वक्त की रोटी बचाने के संघर्ष हैं। ये संघर्ष तो होने ही हैं। जब किसी को कोई मारने आता है तो बचाव में संघर्ष होता ही है। लेकिन यह भी एक ऐतिहासिक तथ्य है कि जिन्दगी बचाने के संघर्ष जिन्दगी बनाने के रास्ते नहीं खोलते। आंदोलनों की राजनीति एक लंबे समय से इन बचावों के संघर्ष में फंसी हुई है। जमीन बचाओ, नर्मदा बचाओ, हिमालय बचाओ, जंगल बचाओ, आजादी बचाओ इन सभी नामों से आंदोलन चलते रहे हैं। ये सब वास्तविक आंदोलन हैं और गरीब वर्गों की जिन्दगी बचे इसके लिए छेड़े जाते रहे हैं। लेकिन यह सब सरकार की आक्रामक नीतियों और पूंजीपतियों व कंपनियों के विस्तार में लोकविद्याधर समाज पर थोपे हुए आंदोलन हैं। यदि किसी गरीब परिवार से यह पूछा जाय कि एक ढंग की जिन्दगी जीने के लिए यानि उनका परिवार एक खाता-पीता परिवार हो और उनके बच्चों के भविष्य में भी कुछ उजाला हो तो वे सब शायद यही कहेंगे कि उनके परिवार में भी एक नौकरी नितांत आवश्यक है। नौकरी करने वालों के परिवार खुशहाल होते हैं, यही चारों ओर दिखाई देता है और यही आज का सच है। गांव में, शहर में, बाजार में, कहीं भी निकल जाइए तो यही सच सामने आता है कि जो नौकरी कर रहा है, हर महीने पक्की तनख्वाह पाता है, उसकी जेब में पैसा है, उसके पास समय है, वह अपने परिवार को घुमाने ले जा सकता है और उसका चेहरा मजबूरियों का पुलिन्दा नहीं नजर आता। इसीलिए सब नौकरी चाहते हैं, उस निजी विद्यालय के शिक्षक की नहीं जिसे रोज चार घंटे पढ़ाने के माहवारी 1,000 रुपये मिलते हैं बल्कि वह सरकारी नौकरी जिसमें आज न्यूनतम वेतन 12,000 रुपये प्रतिमाह है और अन्य सुविधाएं अलग। आरक्षण की सारी दौड़ और मार इसीलिए है। आरक्षण का विरोध भी इसीलिए है। शिक्षा में आरक्षण की मांग इसलिए नहीं है कि लोग शिक्षित होना चाहते हैं बल्कि इसलिए है कि उस शिक्षा के बल पर नौकरी मिलती है। शिक्षा में आरक्षण का विरोध भी इसीलिए है कि उस शिक्षा के बल पर नौकरी मिलती है। मध्यम वर्ग के लोग कर्जा ले-लेकर अपने बच्चों को महंगी शिक्षा के लिए भेजते हैं इसलिए नहीं कि उस शिक्षा में कोई आकर्षण है बल्कि इसलिए कि उस शिक्षा के बल पर नौकरी मिलती है। खुशहाल जिन्दगी के दो ही रास्ते हैं एक पूंजी के बल पर बनती है और दूसरी नौकरी के बल पर। अगर इस देश के 80 फीसदी लोग गरीब हैं तो इसका मतलब है कि उनके पास पूंजी एकदम नहीं है। उनके लिए खुशहाल जिन्दगी का एक ही रास्ता है, और वह है नौकरी का। इसलिए गरीबों की स्वतःस्फूर्त मांग ही उनकी सबसे जायज व तर्कसंगत मांग है और यह है कि सबको नौकरी मिलनी चाहिए।

सरकार की यह जिम्मेदारी है कि वह सबको नौकरी दे। जो नौकरी करने को तैयार है उसे नौकरी मिलनी चाहिए। वह शिक्षित है या नहीं, उसके पास जमीन है या नहीं, उसके यहां कोई धंधा होता है या नहीं इस सबका इस मांग से कोई लेना-देना नहीं है। यह आज का प्रगतिशील मूल्य है कि मियां-बीबी दोनों काम करे। सब नौकरी करेंगे। जिसे जो कुछ आता है उसके बल पर नौकरी मिलनी चाहिए। शिक्षा की कसौटी झूठी और पक्षपातपूर्ण है। पूंजीवाद के प्रचारतंत्र ने इसे महत्त्व का बनाया है। चले जाइए गांव-दराज में, किसानों के बीच, आदिवासियों के बीच, कारीगर समुदायों में, बहुत कम पढ़े-लिखे लोग मिलेंगे, नौकरी करने वाले भी नहीं मिलेंगे लेकिन सभी को कुछ न कुछ आता है, अपने ज्ञान और हुनर के बल पर वे कोई-न-कोई काम अच्छी तरह करना जानते हैं। खेती, बाग-बगीचे, जल प्रबंधन, जंगल, पशु-पक्षी, लोहा, लकड़ी, प्लास्टिक, धातु, कपड़ा, कपास, चमड़ा, मिट्टी, बिजली, मोबाइल, कम्प्यूटर, कार, मोटरसाइकिल, हर चीज का काम जानने वाले लोग हैं। जिसे जो काम आता है उसे वह काम करने की नौकरी मिलनी चाहिए और तनख्वाह कम-से-कम उतनी मिलनी चाहिए जितनी एक सरकारी कर्मचारी को मिलती है। नरेगा के मजदूरों को दिहाड़ी पर नहीं रखा जाना चाहिए। उन सबको वेतन मिलना चाहिए और उनकी नौकरी पक्की होनी चाहिए। जिन्हें जैसे प्रशिक्षण की जरूरत है वैसा प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। कौन-सी ऐसी नौकरी है जिसके शुरू में प्रशिक्षण नहीं दिया जाता?

आज के नौजवानों की सबसे सशक्त मांग यही है कि सबको नौकरी मिलनी चाहिए। लोकविद्या जीवनयापन अधिकार इसी मौलिक अधिकार को व्यक्त करता है, लोकविद्या के बल पर एक खुशहाल जिन्दगी बनाने का अधिकार।

•

वनवासी कहाँ जाएँ

यह उड़ीसा के एक आदिवासी गाँव का दृश्य है। यह क्षेत्र, जिसमें यह गाँव आता है, सरकार द्वारा यहाँ के लोगों से कोई बातचीत किए बगैर आरक्षित वन घोषित कर दिया गया है। 2006 का एक कानून जंगल में रहने वाले आदिवासियों को अपनी पारंपरिक जमीनें जोतने का अधिकार देता है चाहे वे इन आरक्षित वनों के अन्दर ही क्यों न हों। देशभर में ऐसे 602 आरक्षित वन हैं।

इस कानून को लागू करने में वन संरक्षण के अभियानकर्त्ता रोड़ा बने हुए हैं। उनका कहना है कि ऐसा करने से भारत के वन्य जीवन का नाश हो जायेगा। सरकार को एक कदम बढ़ाकर इन आदिवासियों की वहीं पर जीविका कमाने की व्यवस्था को मजबूत करना चाहिए।

•

पृष्ठ 2 का शेष

लोकविद्या जीवनयापन कानून

प्रोटेस्टंट क्रांति केथोलिक गिरिजाघर के अत्याचारों के कारणों से जन्मी। इस क्रांति की एक अहम् मान्यता यह थी कि भौतिक दुनिया और इसकी गतिविधियों में भगवान/खुदा/लॉर्ड की न कोई अहम भूमिका है और न स्थान। इसलिए इसे निजी मामला बताते हुए पिछवाड़े में रखने का सुझाव आम जनता को दिया गया। ऐसे प्रकृति को यतीम करार दिया गया जो सिर्फ शोषण का हकदार बन गई। यह सवाल भगवान या खुदा के होने या न होने का नहीं बल्कि प्रकृति पर किसी एक खास वर्ग के प्रभुत्व जमाने का है। लेकिन इस 'हक' को चुनौती कैसे मिलती, क्योंकि यही 'सही' भी था। नतीजतन यूरोप में अत्याचार के विरुद्ध जन्मे आंदोलन ने 3/4 दुनिया का शोषण किया और उसे सभ्यता का नाम दिया।

लोकविद्या का आधार : जो भारत अपनी धन सम्पत्ति और जनता की खुशहाली के लिए दुनियाभर में प्रसिद्ध था; जहां कृषि में कई प्रकार के उपकरणों का इस्तेमाल होता था (जिन्हें अंग्रेज देखने पर समझ न पाए); जहां का लोहा और इस्पात दुनिया भर में प्रसिद्ध था (बाहरी देशों के लोग लोहा बनाने के तरीके सीखने के लिए भारत आते थे); जहां के कपड़े रंगने के ऐसे तरीके थे जिनसे पक्का रंग चढ़ता हो; जहां के विद्यालय और विश्वविद्यालय दुनिया भर में मशहूर थे; जहां की वास्तु-कला आज भी मंदिरों और किलों में देखने को मिलती हैं; आदि-आदि ऐसे सम्पन्न और विकसित भारत में बड़ी-बड़ी मशीनों का आविष्कार क्यों नहीं हुआ?

यह केवल एक नजरिए के कारण हुआ जिसकी धारणा यह रही कि प्रकृति किसी की भी निजी सम्पत्ति नहीं है, क्योंकि यह किसी ने भी कमायी नहीं है। प्रकृति का जन्म जिस भी कारण से हुआ हो, जैसे भी हुआ हो, यह किसी अनसुनी अनदेखी की अभिव्यक्ति है, जो इसमें सर्वव्याप्त है और कोई भी जीव इस माया से अलग नहीं है। इसलिए इस खुदाई धन का इस्तेमाल इसे बिना हानि किए, समाज और उससे जुड़े मानव की भलाई के लिए हो। क्योंकि यह असीम धन आने वाली पीढ़ियों की अमानत भी हैं अगर बड़ी-बड़ी मशीनों का प्रयोग होता तो अनगिनत हाथ असक्रिय हो जाते; खुशहाली बदहाली में बदल जाती, मजदूरों की गिनती में वृद्धि होती, केवल पूंजी का बोल-बाला होता और मशीनों के हाकिम बे-इन्तहा धन बटोरने में सक्रिय हो जाते। जिससे निश्चित ही शोषण की व्यवस्था वजूद में आती और प्रकृति का विनाश होता, जैसा कि आज कल दुनिया भर के लोग अनुभव कर रहे हैं।

इसलिए, प्रकृति के शोषण के विरोध में, मानव संसाधनों के शोषण के विरोध में, लोकविद्या की सार्वजनिक प्रतिष्ठा के लिए और इसके आधार पर जीवन प्रगति को संचालित करने के लिए, **लोकविद्या जीवनयापन कानून** को लागू करना अनिवार्य है।

•

लोकविद्या जीवनयापन कानून

टी. नारायण राव, हैदराबाद

भारत का समाज गांवों के आसपास संगठित समाज था। हर गांव की अपनी छोटी-छोटी सिंचाई व्यवस्था थी। हर कस्बा कई गांवों से घिरा बाजार का स्थान था, जहां वस्तुओं का लेन-देन होता था। इस तरह के ढांचे में बुनियादी आवश्यकताएं जैसे जीवनयापन, स्वास्थ्य सेवा, भोजन, आवास, शिक्षा और संचार व्यवस्थाओं के मामले में एक तरह की आत्मनिर्भरता निहित थी। भौगोलिक क्षेत्र का विस्तार कृषि व कृषि आधारित गतिविधियों के लिए आवश्यक कारीगरी जैसे लोहारी, बढ़ईगिरी, छोटा व्यवसाय, स्वास्थ्य सेवा आदि में रोजगार के पर्याप्त अवसर के अनुकूल होता था, जिसमें एक शिक्षकों सहित विद्यालय, आस्था और पूजा के स्थान एवं बुनकरी, खाद्य संरक्षण, बीड़ी बनाने जैसे छोटे व कुटीर उद्योग होते थे। ये सभी स्वावलंबी आर्थिकी के परंपरागत उद्योग कहलाते थे। गर्मियों में कृषि कार्य का दबाव सबसे कम होता था तब सार्वजनिक कार्य जैसे तालाबों की सफाई, नहरों की सफाई व पुनर्निर्माण, घरों की मरम्मत, सड़क व संचार की मरम्मत आदि जैसे कार्यों में लोग लगते थे। बीमार, बूढ़े और विधवाओं की संयुक्त परिवारों में देखभाल होती थी।

बड़ी-बड़ी सिंचाई परियोजनाएं और बड़े पैमाने पर वस्तुओं के उत्पादन ने स्थानीय खपत से कई गुना ज्यादा उत्पादन किया और बड़े बाजारों की आवश्यकता पैदा की। इसके चलते कृषि बाजार के लिए ठण्डे गोदाम, कोलतार की सड़कें, यातायात व परिवहन के साधनों का निर्माण हुआ। लेन-देन जो अब तक स्थानीय भाषा-बोली व स्थानीय नियमों के तहत होता था, अंग्रेजों के आने के बाद से अंग्रेजी भाषा, कानून और समझौतों के आधार पर होने लगा। भारत के विभिन्न धर्मावलंबी अभी तक जबानी समझौते व शर्तों पर ही लेन-देन किया करते थे। हालांकि आर्थिकी में कुछ गैर-बराबरी जरूर थी लेकिन अतिरिक्त धन शिक्षा में खर्च होता था या सम्पत्ति के निर्माण में। अंग्रेजों के आने के बाद यह सब बदल गया और विदेशी भाषा में नियम कानून बने और उन्हें समझाने वाले कुछ थोड़े से लोग ही थे, जिन्हें अंग्रेजी आता था। चूंकि सरकारी लेन-देन का व्यवहार अंग्रेजी में होता था, स्थानीय बोली के नागरिक को दोयम दर्जे का स्थान मिला। साइंस व तकनीकी के दस्तावेज सब अंग्रेजी में होते थे और देसी ज्ञान व उत्पादन की तकनीक को पिछड़ा करार दिया गया। स्थानीय खपत के लिए उत्पादन के दर्शन के स्थान पर वैश्वीकरण में बाजार में मुनाफा कमाने व अधिक धन बटोरने के उद्देश्य से उत्पादन करने के दर्शन ने आकार लिया। इससे बड़ी गैर-बराबरी पैदा हुई और जो इस दौड़ में पहले शामिल हुए उन्होंने अधिक तेजी से धन बटोरा। अंग्रेजी शिक्षा व आधुनिक साइंस के पीछे पागल दौड़ शुरू हुई। गांवों के सभी लोगों के विकास का रास्ता छोड़ धन बटोरने की दौड़ में नैतिक मूल्यों की भी तिलांजलि दे दी गयी। हमारे समाज की कमियों को बढ़ा-चढ़ाकर इस तरह पेश किया कि हमारा बीता समय अत्यन्त पिछड़ा दिखाई देने लगा और आज का समाज जो नैतिक मूल्यों से विहीन धन की ओर भागने वाला है फिर भी प्रगतिशील ही दिखाई दे।

पटरी पर की दुकानों को उजाड़ने की जगह उनके लिए शासनादेश के द्वारा नये अधिकारों का सृजन हो जाना चाहिए।

गरीब लोग विद्रोह न कर बैठें इस डर से आरक्षण, सुरक्षा भत्ता आदि जैसे कदम उठाये गये। आज न्यूनतम मजदूरी 100 रुपये ही है, जबकि कैबिनेट सचिव 1 लाख व कंपनी का सीइओ 2-3 करोड़ की तनख्वाह पाता है। सारे फुटकर धंधे व सेवाएं जैसे कपड़ा धुलाई, नाई, लोहा, लकड़ी का काम आदि को खत्म कर सुपर बाजार, टेली बाजार, सर्विस सेंटर जैसी व्यवस्थाओं को बनाया जा रहा है। लोगों को मजदूरी के लिए बाध्य किया जा रहा है। एक स्थान से दूसरे स्थान व एक पेशे से दूसरे पेशे में जाना उनकी मजबूरी बन गयी है।

सदियों से लोकविद्या के बल पर जीविका कमाने वालों का जीवन उजड़ने लगा। लोकविद्या के बल पर जीने वाले पिछड़ा कहे जाने के डर से और उसमें कम कमाई होने के चलते धंधा और स्थान छोड़ने लगे। औद्योगीकरण के नाम पर, सेज बनाने आदि के लिए बड़े-बड़े भूमिखण्ड लिये जाने लगे। संविधान के भाग IVA के अनुसार सन्तुलित आर्थिक विकास की बात रखी गयी थी लेकिन ऐसा नहीं हुआ। धर्म,

... शेष पृष्ठ 8 पर

किसान आंदोलन और लोकविद्या जन आंदोलन

लोकविद्या जन आंदोलन अपने आप को जिन आंदोलनों की निरंतरता में देखता है उनमें से एक प्रमुख आंदोलन किसान आंदोलन है। देश के निकट के इतिहास में यह सबसे बड़ा अहिंसात्मक और अराजनैतिक आंदोलन तो है ही साथ ही इसका उभार ग्रामीण समाज की एक ऐसी एकता के संवरने से हुआ जिसका अनुमान उस समय प्रचलित राजनैतिक विचारों के बल पर लगा पाना संभव नहीं था। आज किसान आंदोलन का विस्तार चाहे घटा हो, लेकिन फिर भी उस एकता की झलक इस बात में दिखाई देती है कि सारे किसानों का हित एक है, इस बात पर आज एकमत है। यह राय न सिर्फ लोकविद्याधर समाज में बल्कि इसके बाहर भी आम है। यह एकता फिर एक बार सक्रिय रूप में सारे लोकविद्याधर समाज की एकता के रूप में ही उभर सकेगी।

बीसवें शतक के अंतिम तीन दशकों में देश का किसान आंदोलन शुरू हुआ, देश के बड़े हिस्सों में फैला, अपनी ऊंचाइयों पर पहुंचा और फिर छोटे स्थानीय संघर्षों के रूप में बिखर गया। देश के सभी हिस्सों में और बड़े राज्यों में आंदोलन ने अपनी साख जमाई। इस दौरान देशवासियों ने दूर दराज के इलाकों से लेकर राज्यों की राजधानियों तथा महानगरों में सटीक मांगों को सामने रखती हुई किसानों की विशाल सभाएं देखीं। इन मांगों के मुद्दे कृषि उत्पाद की कीमतें, उत्पादन की आवाजाही, कृषि ऋण, कृषि को मिलने वाले अनुदान, कृषि उत्पाद के आयात-निर्यात की नीति और प्रकल्पों के लिए किसानों की भूमि का अधिग्रहण ये थे। हालांकि किसान आंदोलन की शुरुआत हरित-क्रांति से प्रभावित क्षेत्रों से हुई, अपने बाद के चरणों में आंदोलन तथाकथित पिछड़े क्षेत्रों में अपेक्षतया अधिक मजबूत और विस्तृत रहा। हालांकि विभिन्न राज्यों के किसान संगठनों ने विभिन्न मुद्दों पर अधिक जोर दिया, इन सभी मुद्दों पर बहस निरंतर चली। राज्यों के किसान संगठनों की अखिल भारतीय किसान समन्वय समिति लंबे समय तक प्रभावशाली रही और आंदोलनों को दिशा देती रही।

किसान आंदोलन का सबसे महत्त्वपूर्ण वैचारिक योगदान यह रहा कि ग्रामीण गरीबी का स्रोत ग्रामीण समाज के बाहर है। किसान और सारे ग्रामीण समाज के शोषण के हथियार गांवों में मौजूद नहीं हैं बल्कि सरकारी नीति की बदौलत तैयार होते हैं। यह नीति भारत-इण्डिया के बीच की खाईं खोदती तो है ही, उसे गहरा भी करती जाती है। देश में व्याप्त गरीबी के स्रोतों का यह विश्लेषण नया और सटीक होने के अलावा उस प्रचलित समझ के एकदम विपरीत था जो गरीबी के कारण खेती की जमीन के विषम विभाजन से लेकर किसान के तथाकथित अनाड़ीपन में खोजती थी। यह विश्लेषण समय की कसौटी पर खरा उतरा। सभी किसान संगठनों की इस एक समझ के कारण ही ये संगठन उनके नेतृत्व के बीच मौजूद तमाम व्यक्तिगत विभिन्नताओं के बावजूद भी किसान समन्वय समिति के रूप में लंबे समय तक साथ रह सके।

किसान आंदोलन की इस समझ का वैचारिक चरम यह था कि गरीबी कृत्रिम है और किसान सरकारी नीतियों की जंजीरों से मुक्त होने पर अपनी जिन्दगी तय करने में सक्षम है। इस विचार के बल पर किसान आंदोलन ने उन सभी विचारों का एक ही झटके में अस्वीकृत कर दिया जो गरीबी के कारण गांवों में ढूंढ़ते थे। साथ ही किसान को ज्ञानी और कृषक समाज को किसी भी बाहरी मदद के सिवाय ही अपने जीवन संगठित करने के काबिल माना गया। आंदोलन के विचार का व्यवहारिक पक्ष आंदोलन की अराजनैतिकता के रूप में सामने आया। इसी अराजनैतिकता के बल पर आंदोलन उन सभी राजनैतिक प्रयासों का जवाब दे पाया जो प्रचलित विचारों की आड़ में ग्रामीण समाज में दरारें बनाने के षड्यंत्र मात्र थे।

वैश्वीकरण किसान आंदोलन द्वारा प्रस्थापित विशाल एकता के रास्ते में बाधा सिद्ध हुआ। इसके और इसके साथ उदारीकरण के आने से उन क्षेत्रों में, जहां कृषि का व्यापारीकरण कुछ अधिक मात्रा में हुआ है, नई उम्मीदें बनीं। ऋण, वित्त और साथ ही राजनीति से नजदीकी रखने वालों को नये रास्तों का अभास हुआ। सरकार के जनता के प्रति दायित्व के बारे में जागरुकता जहां एक तरफ कम हुई, वहीं दूसरी ओर वैश्वीकरण और उदारीकरण की तरफदार सरकार को किसान का पक्षधर होने का दावा करने का भी मौका मिला। लेकिन 'पिछड़े' इलाकों के और असिंचित खेती के किसान पर इस आडम्बर का विशेष असर नहीं हुआ। परिणामवश इन इलाकों में आंदोलन अधिक काल तक बलशाली रहा। बिखरे हुए और अलग-अलग संघर्षों के एक काल बाद आज फिर एक बार यह आंदोलन जोर पकड़ रहा है। आंदोलन के पुनरुज्जीवन में सूखी खेती का प्रश्न और किसान की जमीनों का जबर्दस्ती अधिग्रहण महत्त्व के मुद्दे बन रहे हैं।

इस बात में कोई संदेह नहीं कि किसान आंदोलन के प्रथम चरण में भी वैचारिक दृष्टिकोण और संघर्ष की तीव्रता दोनों ही कसौटियों पर सूखी खेती का सवाल अग्रणी था। सूखी खेती करने वाला किसान सरकारी कार्यक्रमों और अनुदानों से अपने आपको बहुत दूर पाता है। लगभग सारे सरकारी अनुदान रासायनिक खाद, बीज, कीटनाशक और बिजली से संबंध रखते हैं। अनुदान के इन क्षेत्रों का चयन बाजार में बिकाऊ खाद्य उत्पाद तथा औद्योगिक कच्चे माल के उत्पादन की मात्रा बढ़ाने के उद्देश्य से किया गया है, न कि प्रति दायित्व से दैनन्दिन राजनीति के पलायन के संदर्भ में आज कोई एक, छोटा ही क्यों न हो, ऐसा उदाहरण दे पाना कठिन है जिसमें सरकारी पहल से सूखी खेती के किसान को समयोचित राहत मिल पायी हो। कहने का मतलब यह है कि सभी किसानों के शोषण पर खड़ी इस व्यवस्था में सूखी खेती के किसान का बोझ सबमें अधिक असहनीय है।

दूसरी ओर से देखा जाय तो यह भी स्पष्ट है कि संपूर्णतया विपरीत स्थितियों में खेती चलाने का बहुत बड़ा श्रेय असिंचित खेती के किसान को जाता है। यही किसान है जो हर वर्ष, हर माह, हर दिन नई नैसर्गिक और सरकारी नीतिगत समस्या से जूझता है और उसका हल निकालता है। उसकी लोकविद्या ही है जो उसे यह क्षमता देती है। गत वर्ष सितंबर में नागपुर में असिंचित खेती पर हुर्ठ ज्ञान पंचायत ने यह प्रस्ताव किया कि सरकार को चाहिए कि सूखी खेती के किसान को कृषि के प्रथम शोधकर्ता के रूप में पहचाने। विदर्भ में किसानों की आत्महत्या की घटनाओं के लगातार बने रहने के परिप्रेक्ष्य में हाल ही में महाराष्ट्र के एक बड़े कृषि विश्वविद्यालय पंजाबराव देशमुख कृषि विद्यापीठ के कार्य पर भारी आलोचना हुई। अखबारों में यह खुलेआम कहा गया कि यह विश्वविद्यालय इस मामले में किसानों की मदद और आत्महत्या के कारणों की रोकथाम के बारे में कुछ भी करने में असफल रहा है। विद्यापीठ की ओर से पहले तो चिरपरिचित किस्म की बातें बतौर सफाई कही गयीं। लेकिन दबाव के बने रहते विद्यापीठ ने यह घोषणा की कि किसान अपनी खेती पर आवश्यकतानुसार जो नई तकनीक और खेती के तौर-तरीके विकसित करता है उसे विद्यापीठ मान्यता प्रदान करेगा और ऐसे शोधकर्ता किसानों के सम्मेलन भी आयोजित करेगा। इस बात में कोई संदेह नहीं कि एक अधिकारिक प्रस्थापित शोधसंस्था के घमंड में यह एक छोटा-सा ही छेद है। शायद यही हो कि इस विषय पर आगे कुछ भी नहीं किया जायेगा। फिर भी आम लोगों के बीच लोकविद्या की ताकत को पहचाना तो गया।

किसानों के जमीनों के अधिग्रहण का प्रश्न विकराल रूप धारण कर चुका है। पहले तो ऐसे अधिग्रहण सिर्फ बड़े शहरों के फैलने के कारण ही हुआ करते थे। आज यह सारे देश में दूर-दूर तक फैल चुका है। उदाहरणतः विदर्भ में लगभग 80-100 प्रायोजित बिजली प्रकल्पों के लिए जमीनें अधिग्रहित करने की प्रक्रिया काफी आगे तक जा चुकी है। हर जगह किसान जमीनों को मिलने वाले मुआवजे से असंतुष्ट तो है ही, लेकिन जिनकी जमीनें बच भी गई हैं उन्हें डर बना हुआ है कि खेती के पानी को इन प्रकल्पों के लिए मोड़ दिया जायेगा। मतलब यह हुआ कि जमीन खोने वाले विस्थापित होकर तबाह हुए और जमीन बचाने वाले बिना विस्थापन के। जमीनों के जाने से वहां के किसान की अपनी क्षमताओं के प्रयोग और बढ़ोत्तरी का आधार तो खतम होगा ही। अगर उसकी जमीन को, भारी मुआवजा देकर ही क्यों न हो, उसकी इच्छा के विपरीत उससे छीना जाता है, तो उसकी स्थिति ठीक उस कलाकार की तरह ही हुई जिसे अपना मंच और अपने प्रेक्षक छोड़कर चांद पर अपनी कला प्रस्तुत करने को इसलिए कहा जाता क्योंकि चांद इतना खूबसूरत है! जमीनों के अधिग्रहण के खिलाफ संघर्ष जारी हैं। ऐसे एक संघर्ष में अमरावती इलाके के निर्दलीय विधायक श्री बच्चू कडू के नेतृत्व में किसानों ने कहा कि अगर उनकी जमीनें छीनी जाती है तो वे सामूहिक जल समाधि लेंगे।

यह समझना जरूरी है कि सूखी खेती के किसानों की मांगें किसी भी अर्थ में उनकी संघर्षात्मक जरूरतों को पूरे कृषक समाज की जरूरतों से अलग नहीं करतीं। बल्कि ये मांगे तो सारे किसानों की एकता को एक नया आयाम देती हैं, ऐसा आयाम जो किसान की निहित क्षमता और उसकी विद्या की ताकत का दावा करता है। जमीन अधिग्रहण के विरोध में हो रहे संघर्षों की खिलाफत में कई बार यह कहा जाता है कि यह तो किसान को घाटे की खेती में बनाये रखना है, या फिर यह कि यह तो उसे घिसे पिटे पुराने आदर्शों से प्रेरित कर आगे बढ़ने से रोकना है। याद रहे कि खेती को घाटे का धंधा मात्र बनाकर रखने की दृष्टि से बनायी गयी सरकारी नीति के खिलाफ तीन दशकों तक सशक्त आंदोलन खड़े करने वाले विशाल किसान संगठनों ने भी कभी अपने समर्थक किसानों को अपनी जमीनें बेचने की सलाह नहीं दी। और इतना असंवेदनशील कौन होगा जो यह समझे कि अपने जिगर में जल-समाधि का साहस संजोने वाले यह नहीं जानते की जीवन कैसे जिया जा सकता है, या यह कि किसी धुंधले भूतकाल के धुंधले आदर्शों के बल पर या मायावी वर्तमान के उतने ही धुंधले सब्जबाग दिखाकर उन्हें बेवकूफ बनाया जा सकता है।

•

भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन : कैसे बदलाव की ओर

अगस्त का दूसरा पखवाड़ा भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन को समर्पित रहा। अन्ना का अनशन, रामलीला मैदान, तिहाड़ जेल और इंडिया गेट पर हजारों की चहल-पहल बनी रही और इस दौर में देश के तमाम शहरों और कस्बों में भ्रष्टाचार के विरोध में और इस आंदोलन के समर्थन में सभाएं हुईं, धरने दिये गए, जुलूस निकाले गए, प्रभातफेरियां हुईं। अखबारों में और टी. वी. के समाचार चैनलों पर यह सब पूरी तरह छाया रहा। अंत में आंदोलन के मंच से कहा गया कि भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन जारी रहेगा। इसमें जनता को न्याय मिले इससे संबंधित और बातें भी शामिल की गयीं। आंदोलन जारी रहेगा या नहीं, सरकार अन्ना की शर्तों पर एक मजबूत लोकपाल बिल बनाएगी या नहीं या फिर किस किस्म के घटनाक्रम आगे इस सिलसिले में आकार लेंगे, यह अनुमान की दुनिया की बातें हैं और जिन्दा दुनिया की बातें हैं, इसलिए उस पर अपने लिए भी कोई पक्की राय बनाना कोई अच्छी बात नहीं होगी। हालांकि जो हुआ है उसके अच्छे-बुरे की थोड़ी-सी व्याख्या यहां हम लोकविद्या दृष्टिकोण से करना चाहेंगे।

पहले अच्छी बात। इसमें दो बातें हैं : एक, भ्रष्टाचार चाहे भारत की सबसे बड़ी समस्या न हो पर सबको त्रस्त करने वाली समस्या है। शहरी मध्यम वर्ग से लेकर दूर-दराज के गांव तक गरीब किसान, मजदूर, कारीगर, आदिवासी, छोटे-छोटे दुकानदार सभी लगभग रोज इसका दंश झेलते हैं। गरीबों का हक भी बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार रूपी दानव खा जाता है। भ्रष्टाचार की खिलाफत एक लोकप्रिय अवाज और प्रकट जनमानस के रूप में उभरी है, इसके चलते न्याय के लिए और शोषण के खिलाफ संघर्ष करने वालों को ताकत मिलेगी।

दूसरा, जैसा कि हम इन्हीं पन्नों पर इस आंदोलन के शुरू से ही अपनी टिप्पणी में कहते रहे हैं, समाज और राजनीति के बीच एक नए रिश्ते की जरूरत पर जोर दिया गया और उस दिशा में 'सिविल सोसायटी' और सरकार की विधेयक बनाने के लिए एक संयुक्त समिति बनाकर एक ठोस कदम भी उठाया गया। इस संदर्भ में जनता और संसद के बीच संबंध पर बड़ी बहसें हुईं। जन प्रतिनिधि कौन है, क्या संसद में बैठा व्यक्ति ही जन प्रतिनिधि है और कोई नहीं, इस पर भी खुली बहस हुई। संयुक्त समिति का बनना ही इस बात को मान्यता देता है कि चुनावी व्यवस्था की जन प्रतिनिधि की अवधारणा काफी नहीं है, उसे विस्तार देने की जरूरत है और इस प्रक्रिया में शासन के नये रूपों की खोज भी जरूरी है। इसमें राजनीति में संसद के एकाधिकार को चुनौती निहित है। देश को चलाने की किसी भी व्यवस्था में किसी एक संस्था या संस्थाओं के किसी एक समूह का एकाधिकार अंततः निरंकुश सत्ता को ही जन्म दे सकता है। समाज की भागीदारी की एक खुली, लचीली और परिवर्तनशील अवधारणा ही एकाधिकारिक सत्ता से बचने का तरीका हो सकता है। इस आंदोलन का यह बड़ा योगदान है, किन्तु एक कमी जरूर है कि यह बात 'सिविल सोसायटी' के नाम पर की गयी। अगर इससे मुक्त होकर समाज की बात करना हम शुरू नहीं करते, तो यह नयी प्रक्रिया भी बेहद संकुचित रह जायेगी। विशेषज्ञों, संस्थाओं और अंग्रेजी बोलने वालों के हाथों सिमट जायेगी। यह देश बहुत बड़ा है।

अब इस आंदोलन के प्रति एक आलोचनात्मक दृष्टि। कहीं यह आंदोलन उच्च शिक्षित वर्गों द्वारा समाज और राजनीति में अपनी स्थिति वापस हासिल करने का जरिया तो नहीं है? वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण और सूचना क्रांति के चलते पिछले 20 वर्षों में उच्च शिक्षित वर्गों में एक नए विश्वास का संचार हुआ है, इनकी ताकत बढ़ी है। ये वर्ग मुक्त अर्थनीति, निजीकरण और अंग्रेजी के बड़े समर्थक हैं। आजादी के बाद शुरुआती वर्षों में समाज और राजनीति दोनों में ही उच्च शिक्षित वर्गों का दबदबा बढ़ा था। आजादी के पहले भी अंग्रेजों का मुख्य समर्थक वर्ग यही रहा। लेकिन 1960 के दशक के उत्तरार्द्ध से यह स्थिति टूटना शुरू हो गयी। पिछड़े वर्गों, किसान पृष्ठभूमि के लोगों और दलित जातियों के नए सामाजिक और राजनैतिक नेतृत्व ने आकार लेना शुरू किया। किसानों के आंदोलन, आरक्षण के संघर्ष और राजनीति का क्षेत्रीयकरण, इसके प्रकट रूप रहे। नक्सलवादी आंदोलन और जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व के बिहार आंदोलन, दोनों ने ही अपने-अपने ढंग से इन प्रक्रियाओं में जोर भरा। इस दौर में अंग्रेजी बोलने वालों और उच्च शिक्षित वर्गों की भूमिका सिकुड़ने लगी। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इर्द-गिर्द संगठित इन वर्गों की असफलताएं बड़े पैमाने पर उजागर हुईं। एक तरफ विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता देश के लिए एक मरीचिका बनी रह गयी तो दूसरी ओर बड़े उद्योगों, बड़े बांधों और रासायनिक कृषि से होने वाला पर्यावरण का नाश और समुदायों का विस्थापन बड़े-बड़े जन आंदोलनों का कारण बन गया। साथ ही क्षेत्रीय राजनीति ने अंग्रेजीपरक वर्गों की भूमिका को बांधकर रख दिया।

स्थिति फिर पलटी। पिछड़े व दलित वर्गों का नेतृत्व बुनियादी स्तर पर कोई नया रास्ता बनाने में असफल रहा और अपने ही वर्गों के एक छोटे-से हिस्से को आगे बढ़ाने की नीति पर अमल करने लगा। इससे इनका आम जनता के साथ जुड़ाव कमजोर होता चला गया। दूसरी ओर वैश्वीकरण, निगमीकरण और कम्प्यूटर के चलते उच्च शिक्षा और अंग्रेजी दोबारा महत्त्वपूर्ण होते चले गए। उच्च शिक्षित वर्गों की आकांक्षाएं बढ़ती चली गयीं और पिछले दौर में राजनीति का जो विस्तार हुआ था उससे निपटने की वे तैयारी करने लगे। समाज में अपनी पुरानी स्थिति को प्राप्त करने के लिए राजनीति में दखल जरूरी था, भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन ने उन्हें ठीक यही मौका उपलब्ध करा दिया। ध्यान रहे कि आंदोलन का नाम अंग्रेजी में दिया गया है—इण्डिया अगेन्स्ट करप्शन। रामलीला के मैदान में मंच से चलायी जा रही खुली बहस में सवाल-जवाब अंग्रेजी में भी होते रहे। ऐसा शायद पहले कभी न हुआ हो। विशेषज्ञों का और बड़ी नौकरी करने वालों का इतना बड़ा समर्थन और सहयोग शायद ही पहले किसी आंदोलन को मिला हो। इंटरनेट का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर किया गया, सोशल नेट वर्किंग साइट्स, ट्विटर और फेसबुक ने मायावी दुनिया में हलचल पैदा कर दी। अमेरिका में रहने वाले भारतीयों ने अपने संगठनों के जरिये और सार्वजनिक स्थलों में प्रदर्शन करके अपना समर्थन जताया। दूर-दूर के शहरों और कस्बों में एन. जी. ओ., व्यापारिक प्रतिष्ठानों और स्कूल-कॉलेज ने समर्थन की झड़ी लगा दी। किसान, कारीगर, आदिवासी, दलित, पिछड़े वर्ग और मुसलमान तथा इन लोगों के संगठन इक्के-दुक्के तथा यहां-वहां खोजने पर शायद दिखाई दे जाते हैं।

ये है इस आंदोलन का अच्छा और बुरा। बदलाव की शुरुआत तो दिखाई देती है। नीतिगत जड़ता और ठहराव को प्राप्त राजनैतिक व्यवस्था, जिसमें सभी पार्टियां शामिल हैं, पर एक तगड़ा प्रहार हुआ है। उच्च शिक्षित वर्गों, अंग्रेजी वालों, निजी निगमों और एन. जी. ओ. ने अपना दखल बढ़ाने के संगठित प्रयास शुरू कर दिए हैं। क्या लोकविद्याधर समाज, किसान, कारीगर, आदिवासी, छोटे-छोटे दुकानदार और महिलाएं इन परिस्थितियों में अपने न्याय प्राप्त करने के संघर्षों को आगे बढ़ाने के लिए इस दौर का इस्तेमाल करने की तैयारी करेंगे?

•

लोकविद्या जन आंदोलन

लोकविद्या और कला, भाषा व संचार-संपर्क

[12-14 नवंबर 2011 को वाराणसी में होने जा रहे लोकविद्या जन आंदोलन के पहले अधिवेशन के तीसरे दिन यानि 14 नवंबर को कला, भाषा व मीडिया (सिनेमा, टी.वी., प्रिंट, इंटरनेट) और लोकविद्या के बीच संबंधों पर चर्चा केन्द्रित होगी। इस चर्चा का आधार-पत्रक नीचे दिया जा रहा है। **–संपादक**]

लोकविद्या की हर तरफ सराहना हो रही है। संगीत के क्षेत्र में, लोकसंगीत को समाज में इज्जत है। समारोह और सम्मेलनों में लोग इसे खूब पसंद करते हैं। सिनेमा संगीत में इसकी लोकप्रियता का जवाब नहीं है। नौशाद, सचिवदेव बर्मन, ओ. पी. नैय्यर ने तो लोकसंगीत के बल पर लोकप्रियता के झंडे गाड़ दिये हैं। नये संगीतकारों में रहमान, भारद्वाज आदि भी इसमें पीछे नहीं हैं। गीत और बोल के मामले में तो गीतकारों ने लोकगीत ही उठा लिये हैं। लोकगायकी का लोहा कौन नहीं मानता? ठुमरी, चैती, होरी, कहरवा, निर्गुण सभी ने शास्त्रीय संगीत में अपनी खास जगह बना ली है। नाटकों में भी लोककथा, लोकवाद्य, लोकजीवन को इज्जत का स्थान है। हबीब तनवीर को कौन नहीं जानता? कविता, कहानी, उपन्यास और पटकथाओं में लोक भाषाओं का प्राचुरता से इस्तेमाल हो रहा है और लोग इनके दम-खम और अभिव्यक्ति की समृद्धता के कायल हैं। फणीश्वरनाथ रेणु ने हिन्दी साहित्य में जो रास्ता खोला वह आज बहुत चौड़ा हो चुका है और उस पर चलने वाले साहित्यकारों की एक बड़ी संख्या है, वे लोकप्रिय भी हैं। शिल्प की दुनिया में लोककला का सानी नहीं है। फैशन की दुनिया में लोकशिल्प को ऊंचा मान है। कपड़े की बुनाई, रंगाई, छपाई, कसीदाकारी, फर्नीचर के डिजाइन, घरों की बनावट व सजावट, सब में लोककला की बड़ी इज्जत है। यही नहीं विश्वविद्यालयों के ज्यादातर विभागों में आज जो शोध हो रहे हैं उनका आधार लोकविद्या के भण्डार को खंगालने और जानकारियों को संग्रहित करने से संबंधित हैं।

इतना सब होने के बावजूद लोकविद्या को ज्ञान का दर्जा देने और लोकविद्याधर समाजों को ज्ञानी मानने से सभी हिचकते हैं। यह हिचकिचाहट इसलिए है कि ज्ञान के क्षेत्र में केवल साइंस यानि मोटे तौर पर विश्वविद्यालय में पढ़ाये जाने वाले ज्ञान को ही ज्ञान माना जाता रहा। दूसरी बात यह भी है कि ज्यादातर लोगों की उत्सुकता लोकविद्या में तो है लेकिन लोकविद्याधर समाज की बदहाली के प्रति उदासीनता है।

सूचना युग ने एक बदलाव लाया है। इस युग में बढ़ते व्यावसायीकरण के चलते ज्ञान को मुनाफा कमाने की वस्तु में तब्दिल कर दिया है। जिसका सबसे बड़ा नतीजा यह हुआ है कि लोकविद्या यानि लोगों के पास रहने वाले, समाज में पैदा और समृद्ध होने वाले ज्ञान की लूट शुरू हो गयी है। आदिवासियों, किसानों, कारीगरों, महिलाओं के पास लोकभाषा, लोकगीत, लोकसंगीत, लोककला, कृषि, वान्यिकी, जल-प्रबंधन, कारीगरी, स्वास्थ्य आदि अन्य अनेक क्षेत्रों की जानकारियों को संग्रहित करने की होड़ मची है। इस प्रक्रिया से बुनियादी सवाल खड़े हो गये हैं, जैसे—इन अशिक्षित लोगों के पास जो जानकारियां हैं क्या उन्हें ज्ञान का दर्जा दिया जाना चाहिए? क्या इन्हें इनके ज्ञान के सिद्धांत की समझ है? क्या लोकविद्या साइंस के समान है या भिन्न है? क्या इस ज्ञान में तर्क व मूल्यों का प्रकार भिन्न है? क्या लोकविद्या में कला, भाषा व संचार की भिन्न अवधारणाएं हैं? अगर ज्ञान मनुष्य की शक्ति है तो लोकविद्या लोकविद्याधर समाज की ताकत कैसे बने! आदि।

लोकविद्या जन आंदोलन इन और इन जैसे सारे सवालों को बहस का मुद्दा बनाता है और लोकविद्या के श्रेष्ठ ज्ञान होने का दावा देश करता है। आंदोलन की यह मान्यता है कि सभी ज्ञान लोकविद्या से जन्म लेते हैं और लौटकर लोकविद्या में आते हैं। जो ज्ञान धाराएं वापस लौटकर लोकविद्या में नहीं आतीं वे समयांतर में मनुष्य, समाज और प्रकृति की दुश्मन हो जाती हैं।

अभी तक कला के क्षेत्रों ने, सिनेमा, संगीत, नाट्य, चित्रकला, साहित्य, शिल्प सभी क्षेत्रों में, लोकविद्या से बहुत कुछ लिया है। क्या लोकविद्या को वापस लौटाने की किन्हीं जिम्मेदारियों, प्रक्रियाओं और तरीकों पर विचार होना जरूरी नहीं है? क्या लोकविद्या के निर्माणकर्ताओं के प्रति शासन, समाज की कलासंस्थाओं और कलाकारों की कोई जिम्मेदारी बनती है? क्या लोकविद्या की लूट को रोकने और लोकविद्याधरों की तिरस्कृत जिन्दगी को खुशहाली की ओर ले जाने के रास्तों को बनाने में इन सभी को अपनी भूमिका तय करने की जरूरत नहीं है?

क्या संचार और संपर्क (मीडिया) खुद ज्ञान के निर्माण के स्थान नहीं है? क्या मीडिया ज्ञान के प्रबंधन में एक अग्रणी स्थान पर नहीं बैठा है? और यदि ऐसा है तो इससे ज्ञान की कैसी अवधारणा तैयार हो रही है? क्या यह ज्ञान वैज्ञानिक ज्ञान जैसा है या कला व भाषा में निहित ज्ञान से ज्यादा मेल खाता है या फिर क्या यह ज्ञान के प्रति एक नए विचार और नई समझ को सामने ला रहा है? और अंत में यह कि ज्ञान के इस रूप का लोकविद्या से कैसा रिश्ता है? आशा है कि यह चर्चा भी हम 14 नवंबर 2011 को विस्तार से कर पायेंगे।

•

विजयवाड़ा तैयारी बैठक

14 अगस्त, 2011

टी. नारायण राव, हैदराबाद

लोकविद्या जन आंदोलन की यह तैयारी बैठक विजयवाड़ा में पूर्णानन्द पेठ में पान दुकानदार संघ के कार्यालय में हुई। निम्नलिखित उपस्थित थे—मोहनराव (लोकविद्या साधिकार संघटना), बक्का जयरामी रेड्डी (बाग उत्पादक संघ), वी. श्रीनिवास राव (हथकरघा बुनकर संगठन, चिराला), पट्टेन साम्बसिवराव (हथकरघा बुनकर संगठन, मंगलागिरी), जॉन विल्सन (डाक कामगार यूनियन), पृथ्वी भास्कर राव (हथकरधा बुनकर संगठन, मछलीपटनम), नायडू व्यंकटेश्वर राव (मछुआरा यूनियन), टी. नारायण राव (किसान मित्र सम्मेलन, हैदराबाद), बी. कृष्णराजुलु, अप्पाराव, ललित कौल (सभी लो. ज. आ.)

श्री बक्काजयरामी रेड्डी ने अध्यक्षता की। उन्होंने बात शुरू करते हुए फूल और सब्जी की खेती करने वालों की वास्तविक स्थिति की चर्चा के साथ बैठक की शुरुआत की और अन्य भागीदारों से लोकविद्या आधारित जीवनयापन क्रियाओं के ऊपर अपने-अपने विचार रखने को कहा। उनके बाद इस तैयारी बैठक के संयोजक मांचरला मोहनराव ने वाराणसी में होने वाले अधिवेशन के लिए किसान, बुनकर, कुम्हार, बढ़ई, लोहार, सोनार, ठेलेवाले, मोची, मछुआरे, छोटे-छोटे व्यापारी सभी को साथ लेकर चलना है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि तरह-तरह के कारीगरों के संगठनों के संघर्षों के बारे में जानना जरूरी है और यह केवल अपने ही प्रदेश के नहीं बल्कि देश भर के तथा बाहरी देशों के भी। किसानों और कारीगरों के समुद्री तट पर हो रहे विस्थापन के संदर्भ में उन्होंने गरीब घरों के नौजवानों को संगठित करने और वाराणसी ले चलने की बात की और कहा कि ऐसे ही संघर्षों और दबाव से सरकार की नीतियों में बदलाव लाया जा सकता है। नारायण राव ने वैश्वीकरण की नीतियों का खुलासा किया और कहा कि इनके चलते तबाह हो रहे सभी वर्गों को एकजुट होने की जरूरत है। इस संघर्ष में उन्होंने स्थानीय बाजार की भूमिका को बहुत महत्त्वपूर्ण बताया। उन्होंने यह भी कहा कि सरकार को अपने कर्मचारियों पर लोकविद्या से उत्पादित वस्तुओं के इस्तेमाल का बंधन डालना चाहिए।

डॉ. बी. कृष्णराजुलु ने लोकविद्या पर आधारित जीवनयापन के अधिकार की बात की। उन्होंने कहा कि पिछली दो पीढ़ियों से हो रहे बाजार के विस्तार ने अभूतपूर्व उपभोक्तावाद को जन्म दिया है और एक ऐसी उत्पादन व उपभोग की व्यवस्था ने आकार लिया है जिसने लोकविद्या पर आधारित सारे उत्पादन कार्यों और उनके सहारे जीने वाले लोगों, तरह-तरह के कारीगरों, किसानों और आदिवासियों की जिन्दगी को मुसीबत में डाल दिया है। आन्ध्र प्रदेश के समुद्र तट पर हर 100 किलोमीटर पर बड़े-बड़े बिजलीघरों के चलते बड़े पैमाने पर विस्थापन हो रहा है। लोकविद्या के विचार के इर्द-गिर्द ही इकट्ठा होकर जन संघर्षों के बीच एकता कायम की जा सकती है। यही लोकविद्या जनआंदोलन है, जिसका पहला अंतर्राष्ट्रीय अधिवेशन 12-14 नवंबर के बीच वाराणसी में हो रहा है।

वी. श्रीनिवास राव, साम्बशिवराव और पृथ्वी भास्कर राव ने हथकरघा बुनकरों की वास्तविक स्थिति पर प्रकाश डाला और लोकविद्या जन आंदोलन में उनकी भागीदारी का आश्वासन दिया। नायडू व्यंकटेश राव ने बताया कि किस तरह मछुआरों के धंधे पर बड़ी कंपनियों और व्यापारियों का कब्जा होता जा रहा है। उन्होंने सरकारी नीतियों की सख्त आलोचना की और कहा कि सब्सिडी का इस्तेमाल हमेशा ही कारखानदारों को फायदा पहुंचाना है, गरीब लोगों को नहीं। उन्होंने लोकविद्या विचार की सराहना करते हुए कहा कि वाराणसी अधिवेशन में हम आन्ध्रप्रदेश के सभी जिलों से कारीगरों को लेकर चलेंगे। डाक कामगार यूनियन ने सभी के साथ अपनी एकता की बात रखी।

समापन करते हुए अध्यक्ष जयरामी रेड्डी ने कहा कि अभी चल रहा औद्योगिकरण रुकना ही होगा और लोकविद्या जन आंदोलन को इस दिशा में कार्य करना चाहिए। अंत में मोहनराव ने कहा कि वाराणसी अधिवेशन में आन्ध्र प्रदेश से कम-से-कम 10-15 लोकविद्या संगठनों के लोग चलेंगे, यह संख्या 30-40 तक भी जा सकती है।

•

लोकविद्या जन आंदोलन अधिवेशन, 12-14 नवंबर, 2011

चौथी तैयारी बैठक : 28 अगस्त 2011, वाराणसी

विद्या आश्रम पर 28 अगस्त को दिन भर की इस तैयारी बैठक में अधिवेशन के कार्यक्रम, भागीदारी, व्यवस्था, जिम्मेदारियां, वित्त तथा आयोजन से सम्बन्धित समितियों के गठन आदि पर विचार किया गया और कार्यान्वयन के लिए उपयुक्त फैसले लिए गए। पहले अभी तक की तैयारी की रिपोर्ट रखी गयी।

अभी तक की तैयारी : 2010 के नवंबर में वाराणसी में वह पहली बैठक हुई थी, जिसमें लोकविद्या जन-आंदोलन के प्रथम अधिवेशन का फैसला हुआ था, एक वैचारिक प्रस्ताव पारित किया गया था और तैयारी की जिम्मेदारियों का बंटवारा हुआ था। दूसरी तैयारी बैठक फरवरी 2011 के अंत में हैदराबाद में की गई तथा तीसरी तैयारी बैठक इन्दौर में जून के पहले सप्ताह में हुई। इन बैठकों में वैचारिक और संगठनात्मक प्रश्नों पर विस्तार से चर्चा हुई।

अधिवेशन की तैयारी में लोकविद्या व लोकविद्या जन-आंदोलन की चर्चा को आंध्र प्रदेश, विदर्भ, मध्य प्रदेश, बिहार, झारखण्ड और उत्तर प्रदेश के जिलों एवं कस्बों तक ले जाया गया।

इण्टरनेट पर उच्च शिक्षित समुदाय व दूर-दराज के सामाजिक कार्यकर्ताओं तक यह बात पहुंचाई गयी है और उनसे वार्ताएं की गयी हैं। वर्तमान में लोकविद्या जन-आंदोलन ब्लॉग पर खुली बहस जारी है।

पिछले पांच वर्षों में विद्या आश्रम के कार्य में कुछ यूरोपीय आंदोलनों के साथ सक्रिय चर्चाएं हुईं हैं। उन्हें तथा दक्षिण अमेरिका व अफ्रीका के कुछ सामाजिक-राजनैतिक कार्यकर्ताओं तक अधिवेशन का निमंत्रण गया है। ये सब वे लोग हैं जो ज्ञान के प्रश्न में बुनियादी राजनीतिक परिवर्तन की दृष्टि से रुचि रखते हैं।

कार्यक्रम : 12 नवंबर को 11 बजे अधिवेशन शुरू होगा। दिनभर में 12-15 वक्ता लोकविद्या और लोकविद्या जन-आंदोलन पर अपने विचार रखेंगे। लगभग 2 घंटे का समय चर्चाओं के लिए रखा गया है।

13 नवंबर को 10 बजे से कार्यक्रम शुरू होगा। इसमें लोकविद्या जन-आंदोलन के संगठन, कार्यक्रम एवं संघर्ष पर चर्चा होगी। 12 से 15 व्यक्ति सभा को संबोधित करेंगे तथा लगभग 2 घंटे का समय चर्चाओं के लिए रहेगा।

तीसरे दिन कला, मीडिया, भाषा और साहित्य पर चर्चा होगी। इन क्षेत्रों में काम करने वाले विचारक इस बात पर चर्चा करेंगे कि इन क्षेत्रों का ज्ञान व विधाएं लोकविद्या से क्या संबंध रखते हैं तथा वे लोकविद्या का हिस्सा बने इसकी क्या प्रक्रिया हो सकती है?

अधिवेशन कुछ महत्त्पूर्ण मुद्दों पर फैसला लेना चाहेगा और आगे के लिए कुछ प्रस्ताव पारित करना चाहेगा। इस बैठक में आए सुझाव नीचे दिये जा रहे हैं, पाठकों व भागीदारों से और सुझावों एवं इन पर टिप्पणियों की अपेक्षा है।

- किसानों की भूमि का अधिग्रहण बंद होना चाहिए।
- किसान लोकविद्या के आधार पर कृषि अपनाये तथा सरकार इसे बढ़ावा दे।
- देश के हर परिवार में कम-से-कम एक नौकरी हो। जिसे जो आता है उसके बल पर उसे नौकरी मिलनी चाहिए।
- एक लोकविद्या जीवनयापन कानून बनना चाहिए।
- लोकविद्या जन-आंदोलन लोकविद्याधर समाज के संघर्षों का साथ देगा।
- लोकविद्या विचार को फैलाने के लिए कार्यक्रम बनाये जाएं।

प्रस्तावों की दिशा में काम करने के लिए और फैसलों के क्रियान्वयन के लिए एक कम-से-कम 21 सदस्यीय समिति का गठन किया जाय।

भागीदारी एवं व्यवस्था : लगभग 300 लोग इस अधिवेशन में भाग लेंगे। इसमें किसान, कारीगर, आदिवासी, छोटे दूकानदार, महिलाएं, सामाजिक कार्यकर्ता, लोकविद्याधरों के संगठनकर्ता व दार्शनिक तथा विश्वविद्यालय के विद्वान सभी भाग लेंगे।

रहने और भोजन की व्यवस्थाएं विद्या आश्रम के एकदम पास है। अधिवेशन का कार्यस्थल विद्या आश्रम का परिसर है। शहर में गंगाजी के किनारे (सारनाथ से 8 किलोमीटर दूर) भी रहने की व्यवस्था की गयी है। अधिवेशन का कोई पंजीकरण शुल्क नहीं है। रहने-खाने की व्यवस्थाएं अधिवेशन की ओर से की गई जिसके लिए धन, अनाज व अन्य सामग्री का अनुदान इकट्ठा किया गया है। तथापि जो लोग इस खर्च में सहयोग कर सकते हैं वे यहां आने पर अपना सहयोग दे सकते हैं।

एक आयोजन समिति का गठन किया गया है, जिसमें निम्नलिखित व्यक्ति हैं :

चित्रा सहस्रबुद्धे, प्रेमलता सिंह, एकता सिंह, आरती, अनिर्वाण दाश, लक्ष्मण प्रसाद, एहसान अली, गुलजार, दिलीप कुमार (वाराणसी), रविशेखर (लखनऊ), गुंजन सिंह (सोनभद्र), जयप्रकाश यादव (गाजीपुर), राजनाथ यादव (जौनपुर), जितेन्द्र तिवारी (चन्दौली), संतोष संविज्ञ (रविदासनगर), सिद्धनाथ सिंह (मिर्जापुर), अवधेश द्विवेदी (सिंगरौली), सुभाष श्रीवास्तव (रीवां), विजय जोशी (उमरिया), श्यामबाबू जायसवाल (शहडोल), अजय (वैशाली), रवीन्द्र कुमार पाठक (गया), दिलीप कुमार (देवघर), अरुण आनन्द (हजारीबाग), अशोक चट्टोपाध्याय (कोलकाता), गिरीश सहस्रबुद्धे (नागपुर), संजीव किर्तने (इन्दौर), बी. कृष्णराजुलु (हैदराबाद), मोहनराव (चिराला), अविनाश झा (दिल्ली), अमित बसोले (अमेरिका)।

ये लोग अपने-अपने क्षेत्रों से भागीदारी तथा व्यवस्थाओं के लिए जिम्मेदार हैं।

•

लोकविद्या पंचायत के पाठकों से

- **वार्षिक सदस्यता शुल्क रु. 50/-**
- **वेतन पाने वालों से कम से कम रु. 100/- प्रति वर्ष अपेक्षित है।**
- **आजीवन सदस्यता रु. 1000/-**
- **अपने क्षेत्र के लोकविद्याधरों की समस्यायें, संघर्ष एवं संगठनों के बारे में अवश्य लिख भेजें।**

सम्पर्क फोन

+91-9369124998, +91-9838944822

एक दिवसीय सेमिनार–

लोकविद्या जन आंदोलन

25 अगस्त 2011, जन विकास केन्द्र, हजारीबाग (झारखंड)

लोकविद्या सामान्य आदमी के द्वारा प्रतिदिन की दिनचर्या में उपयोग होने वाली कला या विद्या है। इस विद्या का काफी महत्त्व है। इस विद्या को पीछे ढकेल कर विज्ञान सब जगह लेता जा रहा है। इसके साथ यह कहना भी गलत न होगा कि इस विद्या को उचित

सुनील सहस्रबुद्धे विचार व्यक्त करते हुए

सम्मान नहीं मिल रहा है। उदाहरण के तौर पर यदि कोई बुनकर अपनी कला में निपुण है तो उसकी कला ही उसकी लोकविद्या है। उसके पास बड़े-बड़े इंजीनियर तक अपनी समस्या के समाधान के लिए आते हैं। लेकिन फिर भी उसके ज्ञान को विद्या नहीं समझा जाता। क्योंकि उसके पास डिग्री नहीं होती। परंतु वह अपनी लोकविद्या के बल पर ही इस समाज में टिका हुआ है। लोकविद्या के महत्त्व को समझते हुए तथा इसका सामाजिक दावा पेश करते हुए सुनील सहस्रबुद्धे एवं डॉ. चित्रा सहस्रबुद्धे कई स्थानों पर जाकर इस विषय पर आंदोलन का आगाज कर रहे हैं।

इसी क्रम में लोकविद्या जन आंदोलन विषय पर सेमिनार का आयोजन विद्या आश्रम, वाराणसी एवं स्वराज फाउण्डेशन, हजारीबाग के संयुक्त तत्वाधान में दिनांक 25 अगस्त 2011 को जन विकास केन्द्र, हजारीबाग में किया गया। इस सेमिनार में लगभग 100 लोगों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। यह विषय सभी के लिए काफी नया था और इस विषय को जानने और समझने के लिए उनमें काफी उत्साह था। मंच के संचालन की जिम्मेवारी श्री गणेश कुमार वर्मा 'सीटू' निभा रहे थे। सेमिनार की अध्यक्षता स्वराज फाउण्डेशन, हजारीबाग के सचिव अरुण आनंद ने की।

अरुण आनंद ने उपस्थित लोगों से बताया कि इस तरह के सेमिनार का आयोजन हजारीबाग जिले में पहली बार हो रहा है और लोकविद्या का विषय भी हम लोगों के लिए काफी नया है। मंच पर सुनील सहस्रबुद्धे, डॉ. चित्रा सहस्रबुद्धे, अरुण आनंद, गौतम सागर राणा, स्वरूपचंद जैन एवं देवघर से आए दिलीप उपस्थित थे। सभी मंचासीन व्यक्तियों ने अगरबत्ती जलाकर कार्यक्रम की शुरुआत की।

मंच संचालन का कार्य जारी रखते हुए गणेश कुमार वर्मा ने कहा कि लोकविद्या का विषय हमलोगों के लिए काफी नया है, पत्रकारिता के क्षेत्रीयकरण होने से लोग बाहर की बातों को कम ही जान पाते हैं। फिर उन्होंने डॉ. चित्रा सहस्रबुद्धे से लोकविद्या जन आंदोलन के विषय पर प्रकाश डालने का अनुरोध किया।

श्रीमती चित्रा सहस्रबुद्धे ने मंच पर सभी का अभिवादन किया। इसके बाद उन्होंने लोकविद्या के बारे में प्रकाश डालते हुए कहा कि इस विद्या के बारे में पुस्तकों में जानकारी नहीं मिलती। लोकविद्या शब्द की उत्पत्ति आज से 15-20 वर्ष पूर्व बनारस में एक समूह के द्वारा हुई। यह समूह किसान आंदोलन में सक्रिय था। उन्होंने किसानों की हालत पर चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा कि किसानों को उनकी मेहनत और ज्ञान का फल नहीं मिलता है जो कि शोषण का ही एक रूप है। यहीं से लोकविद्या जन आंदोलन के लिए प्रतिबद्धता आयी। उन्होंने अपनी बात को जारी रखते हुए कहा कि किसानों और कारीगरों के पास जो ज्ञान है वह सर्वोच्च है, पर इस हुनर को विद्या नहीं माना जाता है क्योंकि विज्ञान का हमारे समाज में एकाधिकार है। इन्हीं कारणों से लोकविद्या को समाज में पर्याप्त सम्मान नहीं मिल रहा है। लोकविद्या को सामान्य लोग जिन्दा रखते हैं और लोकविद्या इस संसार को जिन्दा रखती है। लोकविद्याधारक समाज में अन्याय को खत्म करके लोकविद्या के बल पर एक खुशहाल समाज बनाने की ताकत है। आजकल ज्ञान को वस्तु में बदलकर मुनाफा कमाया जाता है। सूचना के इस युग के तीन पाये हैं। पहला पाया विस्थापन है, जिसमें वही लोग विस्थापित हो रहे हैं जो लोकविद्या पर आश्रित हैं। दूसरा बाजार तंत्र है, जिसमें किसानों, कारीगरों से सस्ते में सामान खरीदकर उन्हें महंगे दामों में बेचना शामिल है। तीसरा है श्रम के अलावा ज्ञान का शोषण। अंत में उन्होंने इस आंदोलन को जारी रखने की अपील की तथा सभी उपस्थित लोगों को नवंबर माह में बनारस में होने वाले सम्मेलन के लिए आमंत्रित किया।

सुनील सहस्रबुद्धेजी ने भी सभी की जिज्ञासा को शांत करते हुए लोकविद्या पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा लोकविद्या विचार से जुड़ी एक सशक्त राजनीतिक परिकल्पना है। मनुष्य का स्वाभाविक गुण है ज्ञान। उन्होंने आगे कहा लोकविद्या दबायी गयी है, इसलिए दबी हुई है। जितना सिद्धांत विज्ञान में है उससे ज्यादा सिद्धांत लोकविद्या में है। विश्वविद्यालय में केवल ज्ञान को पूंजी या वाणिज्य के आधार पर बांटा जाता है। विश्वविद्यालय समाज को बांटता हैं, किन्तु लोकविद्या समाज को जोड़ने का कार्य करती है। उन्होंने कहा कि संत परंपरा इस देश की ज्ञान परंपरा है। उन्होंने कहा कि भक्ति परंपरा ज्ञान परंपरा है, उसे मात्र भक्ति से जोड़ना एक षड्यंत्र है। उन्होंने लोहियाजी का संदर्भ लेकर कहा कि आगे बढ़ने के दो तरीके हैं। एक यह कि पहले थोड़े से लोग आगे बढ़ें और फिर और लोगों को बढ़ायें और दूसरे में सभी को धीरे-धीरे मगर साथ-साथ बढ़ने का मौका होता है। यह दूसरा तरीका लोकविद्या का है। लोकविद्या कोई किताबों में लिखा हुआ ज्ञान नहीं जिसे पढ़कर हासिल किया जा सके। यह सोचने का एक तरीका है जिसे हम तार्किक ज्ञान भी कह सकते हैं। लोकविद्या पारंपरिक नहीं है बल्कि वही यह तय करती है कि परंपरा क्या है।

इसके क्रम में गौतम सागर राणा, अधिवक्ता स्वरूपचंद जैन, नेहरू यादव, सी. पी. डी. श्रीवास्तव, अर्जुन, मिथलेश तथा अनिल वर्मा आदि ने भी अपनी-अपनी बातों को रखा। गौतम सागर राणा ने कहा कि हमारी आधी जिन्दगी अंग्रेजी से लोहा लेने में चली जाती है। लोकविद्या सिर्फ जीविका का ही साधन नहीं अपितु हमारी संस्कृति है। उन्होंने अंत में लोकविद्या को लोक भाषा के साथ जोड़ने की बात कही। नेहरू यादव ने कहा कि हम सभी दैनिक उपयोग में लोक विद्या का प्रयोग करते हैं पर अब तक इस विषय से अनभिज्ञ थे। उन्होंने हजारीबाग जिले के बड़कागांव के विस्थापितों के दर्द को भी सभी के सामने रखा। सी. पी. डी. श्रीवास्तव ने कहा कि लोक भाषा के विकास के साथ ही लोकविद्या का विकास संभव है। मिथलेश ने लोकविद्या का उदाहरण देते हुए कहा कि गांव में कुरथी खाने पर खास जोर दिया जाता था क्योंकि ऐसा मानना था कि चावल के साथ जाने वाले पत्थर को यह गला देगा। आज पथरी के ईलाज में इसका प्रयोग हो रहा है।

सेमिनार अध्यक्ष अरुण आनंद के धन्यवाद के साथ शाम 5 बजे समाप्त हुई।

•

रपट–

सिंगरौली में पर्यावरण दिवस पर फूटा आक्रोश

अजय, सिंगरौली

अधिकाधिक मुनाफा कमाने की होड़ में पर्यावरण सुरक्षा के सारे नियम कानूनों को धता बताते हुए जिस तरह से सरकारी और गैर-सरकारी कंपनियां सिंगरौली क्षेत्र के संसाधनों की लूट में लगी हुई हैं उसके परिणाम विविध रूपों में बड़ी तेजी से सामने आ रहे हैं। इस इलाके में पर्यावरण संबंधी कराये गये अध्ययनों की रिपोर्टें भले ही आम आदमी की पहुंच से दूर रहती हो लेकिन इस क्षेत्र में रहने वाले सभी वर्ग के लोग जिस तरह से दिन दूनी रात चौगुनी रफ्तार से बढ़ रहे हवा, पानी, खाद्यान्न को जहरीला बना रहे प्रदूषण की मार झेल रहे हैं उसे परियोजनाओं द्वारा पर्यावरण सुरक्षा के नाम पर किये गये दिखावे से झुठलाया नहीं जा सकता है। इसके विपरीत प्रतिवर्ष 'विश्व पर्यावरण दिवस' के नाम पर इन कंपनियों द्वारा किये जाने वाले ढोंग से लोगों का आक्रोश और भी भड़क उठता है जब वे देखते हैं कि किस तरह तुगलकी सनक के चलते रिहंद बांध ने इस इलाके की सबसे अच्छी उपजाऊ खेती की जमीन तथा सोलह प्रतिशत जंगल एक झटके में डुबो दिया, एन.सी.एल. की दर्जन भर कोयला खदानों तथा बिजलीघरों की ट्रौसमिशन लइनों के चलते बचे हुए वनों का बड़े पैमाने पर विनाश हुआ, कोयला खदानों में की जाने वाली ब्लास्टिंगों से न केवल बस्तियों के मकान दरके हैं बल्कि इलाके का जल स्तर भी तेजी से नीचे गिरा है, देखते ही देखते तमाम छोटे-बड़े नाले, नदियां सूख गयीं। जो नदियां बच रही हैं वे भी कारखानों, कालोनियों के मलबों को सीधे उनमें बहाये जाने से बुरी तरह प्रदूषित और मृतप्राय हैं। बिजलीघरों से प्रतिदिन निकलने वाली घातक जहरीली राख लाखों लाख टन की मात्रा में रिहंद जलाशय के पानी को विषाक्त बनाती है। इतना ही नहीं कभी चोरी-छिपे तो कभी खुल्लमखुल्ला धड़ल्ले से बिजलीघरों द्वारा राख सीधे रिहंद में बहा दी जाती है जिससे जलाशय तेजी से पटता जा रहा है। बिजलीघरों की चिमनियों से निकलने वाली गैसों व पारे की बड़ी मात्रा से घातक बीमारियां फैल रही हैं। रिहंद जलाशय के प्रदूषण से क्षेत्र का भूगर्भीय जल भी प्रदूषित हो गया हैं इतना सब होने के बावजूद भी इन भारी भरकम परियोजनाओं और कंपनियों द्वारा पर्यावरण की रक्षा के लिए कारगर कदम नहीं उठाया जा रहा है बल्कि सिंगरौली की इस दुर्दशा के लिए एक-दूसरे पर दोषारोपण किया जा रहा है। शासन-प्रशासन इस मामले में हमेशा की तरह आज भी मूक दर्शक बना हुआ है। इसके द्वारा कभी भी पर्यावरण सुरक्षा मानकों को ईमानदारी से, सख्ती के साथ लागू करवाने का प्रयास नहीं किया गया। अलबत्ता शासन की सक्रियता डंडा के बल पर कंपनियों को जमीन दिलवाने और कब्जा करवाने में देखते ही बनती है। इसके लिए अधिकारियों को पुरस्कृत भी किया जाता है।

ऐसी स्थिति में साल के तीन सौ चौंसठ दिन पर्यावरण मानकों की धज्जियां उड़ाते हुए प्रदूषण फैलाने वाली कंपनियां जब एक दिन के लिए 'विश्व पर्यावरण दिवस' के अवसर पर पर्यावरण सुरक्षा का राग अलापते हुए तरह-तरह के दिखावे के ढोंग रचती हैं तो यहां के भुक्तभोगी आमजनों का आक्रोश इस ढोंग का पर्दाफाश करने के लिए उद्वेलित हो उठता है। सिंगरौली क्षेत्र की जनता के इस गुस्से को अभिव्यक्ति देने के लिए, 'विश्व पर्यावरण दिवस' 5 जून 2011 के अवसर पर इलाके में लंबे समय से विस्थापन के मुद्दे पर सक्रिय सामाजिक संस्था 'सृजन लोकहित समिति' ने अपने सहयोगी संगठनों—सिंगरौली विकास मंच, अमृता सेवा संस्थान, अकिंचन सेवा संस्थान, आजादी बचाओ आंदोलन एवं पीस के साथ जन चेतना रैली निकाल कर, मंच उपलब्ध कराया।

कार्यकर्तागण प्रातः 9 बजे कोल इंडिया लिमिटेड की सहायक कंपनी नार्दन कोल फील्ड्स लिमिटेड के मुख्यालय सिंगरौली (मोरवा) में एकत्र हुए। वहां से रैली सिंगरौली बाजार पहुँची, जहां सिंगरौली विकास मंच के व्यापारी नेता सतीश उप्पल के नेतृत्व में व्यापारियों ने भी भागीदारी की। जन चेतना रैली नारे लगाती आगे बढ़ी ''कंपनियों होश में आओ। पर्यावरण दिवस मनाने का ढोंग बंद करो। पर्यावरण सुरक्षा मानकों का पालन करो। सच कहना अगर बगावत है तो समझो हम भी बागी हैं। जब तक भूखा इंसान रहेगा, धरती पर तूफान रहेगा'' आदि नारे लगाते हुए बाजार के विभिन्न मार्गों से होती हुई ट्रेड यूनियन मार्ग पहुंचकर जन सभा में तब्दील हो गयी।

जनसभा को संबोधित करते हुए पर्यावरण कार्यकर्ता रामसुभग शुक्ला ने कहा कि कंपनियों का ध्यान सिर्फ मुनाफा कमाने पर है। एन.टी.पी.सी. जो अभी तक देश की 'नवरत्न' कंपनियों में शुमार की जाती थी अब सबसे ज्यादा मुनाफा कमाने वाली 'महारत्न' हो गयी है। लेकिन इसकी कीमत तो यहां रहने वाले लोगों को चुकानी पड़ती है। जल, जंगल, जमीन आदि संसाधनों के छिनने के बाद यहां के लोक विद्याधर—किसान, आदिवासी, महिला, कारीगर तरह-तरह के हुनर होते हुए भी बेरोजगार हो गये हैं और सस्ता अकुशल ठेका मजदूर बनने को विवश हुए हैं। इसको कैसे विकास कहा जा रहा है। यह तो विनाश है। इसीलिए सिंगरौली के विनाश में लगी कंपनियों द्वारा पर्यावरण दिवस मनाने के ढोंग का विरोध करने के लिए हम लोग बाध्य हुए हैं। बचपन के दिनों को याद करते हुए व्यापारी नेता सतीश उप्पल ने कहा कि पहले यह इलाका खूब हरा-भरा हुआ करता था, तमाम जंगली जीव होते थे। आज जंगल खत्म हो गये, वन्य प्राणी भी लुप्त हो गये। बिजुल जैसी चपल धारा और साफ पानी वाली नदी मलबा बहाये जाने के कारण इस कदर प्रदूषित हो चुकी हैं कि इसका पानी हाथ धोने के लायक भी नहीं रह गया है। वरिष्ठ पत्रकार रोहित कुमार गुप्ता का कहना था कि क्षेत्र में प्रदूषण इस कदर बढ़ गया है कि कभी राजरोग कहे जाने वाले टी. बी., कैंसर जैसे रोग अब गरीबों और बच्चों तक को होने लगे हैं। प्रदूषण फैलाने और हर तरह की लूट के मामले में निजी कंपनियों ने सार्वजनिक उपक्रमों को बहुत पीछे छोड़ दिया है। सरकारी कंपनियां हो-हल्ला मचाने पर डरती थीं, कायदे-कानूनों का कुछ पालन भी किया करती थीं पर ये निजी कंपनियां तो उल्टे लोगों को डराती हैं, गुण्डों से पिटवाती हैं। नियम-कानूनों की कोई परवाह नहीं करतीं क्योंकि इन्हें राज्य एवं केन्द्र के नेताओं का वरदहस्त प्राप्त होता है। सृजन लोकहित समिति के संयोजक अवधेश कुमार ने कहा कि आज कंपनियां सिंगरौली क्षेत्र में जो भी बरबादी कर रही हैं वह विकास के नाम पर कर रही हैं। इस तरह के विकास को देश के सभी राष्ट्रीय राजनीतिक दलों का समर्थन प्राप्त है, जबकि गांधीजी ने हिन्द स्वराज्य में बहुत पहले ही इस तरह के विकास की कड़ी आलोचना की थी। बाजार में पैसा तो बहुत आ गया है पर गैर-बराबरी भी बहुत तेजी से बढ़ी है यही कारण है कि दूकानों में माल भरा पड़ा है पर आम लोगों को जरूरत की चीजें नहीं मिल पा रही हैं। सिंगरौली क्षेत्र में भी पैसा खूब आया है, जो लोग साधन सम्पन्न हुए हैं उनका पैसा आर्केस्ट्रा, नाच आदि गलत जगह खर्च होता है। धर्म के नाम पर होने वाले तमाम आयोजनों में भी लोग खूब पैसा बहा रहे हैं, जबकि सिंगरौली के साधन सम्पन्न लोगों की जिम्मेदारी बनती है कि वे सिंगरौली के अस्तित्व के संघर्ष में भागीदारी करें। कंपनियों को चेतावनी देते हुए आपने कहा कि मैं इस जनसभा के माध्यम से दो माह का समय देता हूं कि कंपनियां अपने एजेंडे में इलाके की तीन प्रमुख समस्याओं—पानी, जीविका और प्रदूषण को शामिल करें अन्यथा सिंगरौली की जनता 'कंपनियों सिंगरौली छोड़ो' का नारा लगाने को बाध्य होगी।

जनसभा को संबोधित करने वाले वक्ताओं में जयप्रकाश कुशवाहा, अनिल झा, नर्मदा कुशवाहा, एडवोकेट अरविन्द गुप्ता आदि प्रमुख रहे। रैली को सफल बनाने में वरिष्ठ पत्रकार कालिका प्रसाद गुप्ता, दिव्या, रामाधार मिश्र आदि का सहयोग उल्लेखनीय रहा। सभा का संचालन अजय कुमार ने किया एवं अध्यक्षता अवधेश कुमार ने की।

•

भारतीय किसान यूनियन

वाराणसी में राष्ट्रीय एवं प्रांतीय किसान नेताओं की पंचायत

लक्ष्मण प्रसाद, जिलाध्यक्ष, भारतीय किसान यूनियन, वाराणसी

भारतीय किसान यूनियन के राष्ट्रीय महासचिव राजपाल शर्मा, राष्ट्रीय प्रवक्ता श्री राकेश सिंह टिकैत, उत्तर प्रदेश के प्रांतीय अध्यक्ष श्री दीवानचन्द चौधरी, प्रांतीय महासचिव घनश्याम वर्मा का एक दिवसीय मण्डल स्तरीय समीक्षा दौरा दिनांक 10 अगस्त, 2011 को सारनाथ वाराणसी में हुआ। उक्त पंचायत में वाराणसी मण्डल अध्यक्ष श्री जगदीश सिंह यादव, मण्डल महासचिव दिलीप कुमार 'दिली', श्रीमती प्रेमलता सिंह, वरिष्ठ किसान नेता बाबूलाल मानव और सुनील सहस्त्रबुद्धे, गाजीपुर जिलाध्यक्ष श्री दिनेश चन्द पाण्डेय, जौनपुर जिलाध्यक्ष श्री राजनाथ सिंह, वाराणसी जिलाध्यक्ष श्री लक्ष्मणप्रसाद मौर्य, चन्दौली जिलाध्यक्ष श्री जितेन्द्र प्रताप तिवारी उपस्थित रहे। राष्ट्रीय एवम् प्रांतीय नेताओं ने बरईपुर गांव में किसानों की एक जनसभा को भी संबोधित किया।

इस अवसर पर वाराणसी के किसानों के साथ एक पंचायत आयोजित की गयी। इस पंचायत में वाराणसी के विभिन्न क्षेत्रों से किसान शामिल हुए, जिसमें जमीन बचाने का संघर्ष चला रहे किसानों की उपस्थिति महत्त्वपूर्ण रही।

पंचायत को सम्बोधित करते हुए श्री राजपाल शर्मा ने कहा कि पूरे देश में किसानों की जमीन छीनने का कार्य सरकारें कर रही हैं। किसान जमीन की लड़ाई लड़ रहा है और जीत भी रहा है। कोर्ट किसानों के पक्ष में फैसले दे रहा है। सरकार यह बात मानती है कि किसान की मर्जी के बिना जमीन नहीं ली जाएगी, लेकिन अभी भी किसानों के साथ जोर-जबर्दस्ती जारी है। किसान संगठित रहेंगे और आंदोलन करेंगे तभी उनकी जमीन बचेगी। संगठन बनाने पर पूरा ध्यान देना होगा। राष्ट्रीय प्रवक्ता राकेश सिंह टिकैत ने कहा कि खेती का काम करने वाले सभी किसान हैं। जिनके पास अपना खेत नहीं है और दूसरे के खेतों पर खेती करते हैं, उन्हें हम मजदूर नहीं कहेंगे। वे भूमिहीन किसान हैं। भूमिहीन किसानों के समस्याओं और कष्टों को भी हमें उठाना होगा। उनकी मांगों के लिए भी आंदोलन करते रहना होगा। आगे उन्होंने कहा कि बीज विधेयक के खिलाफ लड़ाई लड़नी होगी। ऐसा कानून आ रहा है कि हम बीज नहीं बना सकते, उसका इस्तेमाल भी नहीं कर सकते। हमें बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का ही बीज खरीदना होगा। अगर हम इस नियम का उल्लंघन करते हैं तो हमें सजा भी हो सकती है। आगे उन्होंने कहा कि किसानों की समस्याओं को लेकर पिछले 9 मार्च को दिल्ली घेरने का कार्यक्रम था, लेकिन प्रधानमंत्री ने 8 मार्च को ही वार्ता करके आश्वासन दिया कि आपकी मांगों पर विचार किया जाएगा। आप दिल्ली घेरने का अपना आंदोलन वापस ले लीजिए। उनकी बात को मानकर आंदोलन वापस ले लिया गया लेकिन हमारी मांग पर आज तक कोई भी विचार नहीं हुआ। अतः अगले 18 अक्टूबर को दिल्ली के जंतर-मंतर पर धरना-प्रदर्शन किया जाएगा, जिसमें पूरे देश से किसान आएंगे। प्रांतीय अध्यक्ष दीवानचन्द चौधरी ने कहा कि दिल्ली के आंदोलन में हमें पूरी ताकत झोंकनी है। अपनी मांगों को मनवाना हैं 3 प्रतिशत नौकरी करने वाले लोगों के हित के लिए बनाये गए छठें वेतन आयोग की रिपोर्ट बिना विलम्ब किये लागू कर दिया गया और देश के 80 प्रतिशत किसानों के हित में बनाया गया स्वामीनाथन आयोग की रिपोर्ट को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया गया हैं किसानों की बहुत सारी समस्याएं स्वामीनाथन आयोग की रिपोर्ट को लागू कर देने से हल हो जाएंगी। प्रांतीय महासचिव घनश्याम वर्मा ने कहा कि गांव, न्यायपंचायत, ब्लाक, तहसील और जिला स्तर पर संगठन को मजबूत करके व पदाधिकारियों का चयन करके ही किसी भी आंदोलन को लड़ा जा सकता है और उसे जीता जा सकता है।

वाराणसी जिलाध्यक्ष लक्ष्मण प्रसाद ने समीक्षा बैठक में यह जानकारी दी कि वाराणसी के सारनाथ स्थित बरईपुर के किसान अपनी 84 बीघे जमीन को बचाने का संघर्ष चला रहे हैं। नगर निगम इनकी जमीन पर लोटस पार्क और वाटर ट्रीटमेण्ट प्लाण्ट बनवाना चाहता है। श्रीमती राधा देवी, गंगाजली देवी, भगवन्नी देवी, खनमन राजभर, सतीश राजभर, रामलखन राजभर, रामप्रसाद राजभर इत्यादि लोगों के सहयोग से यहां का संघर्ष चल रहा है। काशी विद्यापीठ ब्लाक के अंतर्गत करसड़ा गांव के किसान कूड़ा डम्पिंग प्लाण्ट और भूमि अधिग्रहण के खिलाफ विगत 29 जून से अनिश्चितकालीन धरना पर बैठे हैं। चुन्नीलाल, सालिक राम, आसा राम, रामूपाल, सामू पाल, रामजीत यादव, गनपत, भृगुनाथ सिंह, चम्पा, चमेला, बेइला, फूलपत्ती, राजकुमारी, शान्ति देवी इत्यादि के सहयोग से यह आंदोलन चल रहा है। चिरईगांव ब्लाक के अन्तर्गत दीनापुर गांव के किसान सीवेज ट्रीटमेण्ट प्लाण्ट की दुर्व्यवस्थाओं से त्रस्त होकर प्लाण्ट को हटाने के लिए आंदोलन छेड़ने का मन बना लिया है। अवधेश सिंह, जगदीश मौर्य, एकराम शाह, बरखू मौर्य, महेन्द्र कुमार मौर्य, बचाऊ लाल मौर्य, मुकेश कुमार मौर्य इत्यादि लोग सक्रिय भूमिका में हैं। इन सभी संघर्षों में भारतीय किसान यूनियन नेतृत्व कर रहा है।

•

दायरा टूटा जगा किसान

(वाराणसी प्रशासन द्वारा करसड़ा गाँव के किसानों की जमीन छीने जाने पर आधारित)

दिलीप कुमार 'दिली', वाराणसी

भूमिहीनों के लिए
चकबन्दी कर जमीन लिये
मैं, विरोध में था
मुझमें भूमिहीनता का दर्द न था।
वो ग्राम समाज की भूमि
दीनों को दान दिये,
मैं मौन था
गरीब का हित सधे,
लोकहित का ज्ञान न था।
बुनकर कॉलोनी के लिये
सरकारी प्रावधान था
आवंटित जमीन छीना
प्रशासन मनमान बना।
खेती की धुन में मैं न बोला
जबकि खुद कुशल किसान था।
फिर ए टू जेड कंपनी के लिए
कूड़ा डाम्पिंग प्लान आया
आवंटित बंजर के साथ-साथ
खुदकाश्त भूमि भी लेने का प्लान बना
मेरे जैसा किसान चकित परेशान था।
सरकार का बहरा कान था।
कहीं नहीं होती सुनवाई
बोलने वाला दूजा ना कोई।
नीम बीमार अंधेरे में
भूमिहीन हो सड़क पर गिरा
अब मुझे एहसास हुआ
विकास की कीमत पर
उजड़ चुका किसान था।
क्यों न बोला मैं पहले ही?
पछतावे में जल रहा।
देर ही सही, अब धो लूं पाप
संगठित हों भरूं हुंकार
न देंगे जमीन अपनी
न लेंगे कूड़ा शहर का
न करेंगे मुफ्त का श्रम
जियेंगे अपने ज्ञान के बल पर।।

•

भारतीय किसान यूनियन

भ्रष्टाचार के विरोध में पंचायत

बबलू कुमार, वाराणसी

भारतीय किसान यूनियन वाराणसी इकाई की पंचायत, 22 अगस्त 2011 को जिला मुख्यालय पर श्रीमती भगवन्नी देवी की अध्यक्षता में की गयी। वक्ताओं ने अन्ना हजारे के भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन का समर्थन किया। दीनापुर गांव से आए किसान अपनी समस्याओं को रखते हुए बताए कि 26 वर्ष पहले सीवेज ट्रीटमेंट प्लाण्ट के लिए किसानों की जमीन ली गयी थी। किसान आज तक मुआवजा के लिए जिला न्यायालय से लेकर सुप्रीम कोर्ट तक का चक्कर लगा रहे हैं। किसानों के पक्ष में सभी न्यायालय में फैसला होने के बावजूद जिला प्रशासन व जल निगम मामले को उलझाए हुए है। इससे त्रस्त होकर दीनापुर के किसान सीवेज ट्रीटमेण्ट प्लाण्ट के खिलाफ आंदोलन छेड़ने के लिए बाध्य हुए हैं। 25 अगस्त दिन गुरुवार को सीवेज ट्रीटमेण्ट प्लाण्ट के गेट पर एक दिवसीय धरना रखा गया है। बरईपुर सारनाथ के छोटे-छोटे किसान अपनी कृषि योग्य भूमि बचाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। नगर निगम और पर्यटन विभाग इनकी जमीन पर वाटर ट्रीटमेण्ट प्लाण्ट और लोटस पार्क बनाना चाहते हैं। इसके खिलाफ यहां के किसान एकजुट होकर प्रशासन के इस कारनामे को लगातार रोक रहे हैं, किसी भी कीमत पर वे अपनी कृषि योग्य भूमि नहीं छोड़ेंगे। काशी विद्यापीठ ब्लॉक के करसड़ा गांव के किसान भूमि अधिग्रहण एवं कूड़ा डम्पिंग प्लाण्ट के विरोध में 55 दिनों से आंदोलन चला रहे हैं। जिला प्रशासन उनकी बात को अनसुनी करता जा रहा है। किसानों का धैर्य टूटने पर आंदोलन कोई भी रूप ले सकता है। अतः समय रहते कूड़ा डम्पिंग प्लाण्ट योजना रद्द होनी चाहिए और किसानों को उनकी जमीन वापस मिलनी चाहिए।

उपर्युक्त सभी जगहों के किसान जिला मुख्यालय पर अपने विचार व्यक्त किए तथा अपनी समस्या के समाधान होने तक संघर्ष करने का संकल्प लिया। पंचायत को जिलाध्यक्ष लक्ष्मण प्रसाद ने सम्बोधित किया। सायं 3 बजे जिलाधिकारी के साथ पंचायत करने कृषि भवन में किसान कूच कर गए। इस पंचायत में सर्वश्री अवधेश सिंह, बचाऊ मौर्य, जगदीश मौर्य, बरखू मौर्य, मनोज सिंह, मुकेश कुमार मौर्य, महेन्द्र मौर्य, रामू पाल, भृगुनाथ सिंह, चुन्नीलाल, कृष्णकुमार, बबलू कुमार, रामलखन, राधा देवी, लालती, गुलाबी, बसन्ता राम, दयाराम, शोभनाथ, रामजी, महादेव मास्टर, भिखुर, ऋषि नारायण, खनमन गोड़, रमाशंकर, राजकुमार, भाईलाल इत्यादि शामिल रहे। संचालन दिलीप कुमार 'दिली' ने किया।

•

सब कुछ किसान विरोधी

देवेन्द्र शर्मा

हरित-क्रांति के 30 सालों बाद भी सब कुछ किसान-विरोधी चल रहा है, खासतौर से छोटे किसान का विरोधी। अधिक पूंजी-निवेश चाहने वाली तकनीकों को तो वैसे ही अपना नहीं सकते थे, बाकी रही-सही कमी पूरी कर दी उदारीकरण ने, जो सन् 1990-91 से शुरू हुआ। अब ये किसान करोड़ों डालर वाले कृषि-उद्योगों के सहारे छोड़ दिए गए हैं।

हजारों किसान हर तरह के कुलाबे जोड़-जाड़कर अपनी फसलों को कच्चे माल की बजाए पके-पकाए माल बनाने-बेचने से अधिक कमाई करने के सपने देखने लगे हैं इसमें निजी कंपनियां इनसे माल खरीदने के सौदे तो कर लेती हैं, लेकिन बाद में मुकर जाती हैं। इसके लिए उनके पास सौ बहाने हैं। भले ही खाद्य व्यापार के कैडबरी, पेप्सी और कार्गिल जैसे मठाधीश हों या फिर दोयम नंबर के कृषि-उद्योग, सबका इरादा एक ही है कि किसान का जहां तक हो सके शोषण करो। ये उनसे कहेंगे कि तुम टमाटर उगाओ और हम पूरा खरीद लेंगे और टोमेटो प्यूरी बनाकर या टोमेटो-सॉस बनाकर बेचेंगे और तुम्हें टमाटर के अच्छे दाम देंगे। एक-दो साल पूरे दाम देंगे और फिर अचानक दाम घटा देंगे। किसान को मजबूरन घटी कीमत लेकर ही संतोष करना पड़ेगा। खेती करने में जो मौसम, कीड़े और बीमारियों के जोखिम हैं, वे सब तो किसान के हैं ही।

कंपनियों के बहाने तो देखिए। किसी साल वे संतरा-उत्पादकों से कहेंगे कि अब उतने दाम नहीं दे सकते, क्योंकि तुम्हारे संतरों में लिमोलाइन का अंश बढ़ गया है। आलू-उत्पादकों को कहेंगे कि आलू मीठे हो गए हैं। भले ही ठेका किया गया हो, लेकिन खाद्य-कंपनियां किसानों के माल में कुछ न कुछ खामियां निकालती रहेंगी और या तो कीमत घटा देंगी या फिर खरीदना बंद कर देंगीं। भोलेभाले किसान से कहा जाता है कि 'जब दाम ऊंचे हों, माल निकाल दें और जब दाम गिरें तो उस समय घाटे से बचें। यह कहना तो आसान है, मगर करना मुश्किल है। टमाटर या आलू भर कर रखने के लिए उसके पास शीत-गोदाम कहां हैं? 11 करोड़ छोटे किसानों में से 60 प्रतिशत के पास मुश्किल से एक एकड़ से भी कम जमीन है और इनमें से अधिकतर के लिए कृषि ही जीविका का एकमात्र साधन है। उनको कृषि के व्यापारीकरण के मोहजाल में फांसने का मतलब होगा, उनकी मुसीबतें और भी बढ़ा देना।

पेप्सी जैसे खाद्य-मठाधीश भी किसानों को चूना लगाने में जरा भी नहीं हिचकते। पेप्सी फूड्स ने पंजाब के किसानों से वायदा किया था कि वहां बागवानी में क्रांति ला देंगे और खेती में आए ठहराव को तोड़ देंगे। उन्होंने साफ कहा था कि भारत के आलू चिप्स बनाने के काबिल नहीं है। लेकिन पांच साल बाद यही कंपनी भारत की 'चंद्रमुखी' किस्म के आलू के चिप्स बनाकर बेच रही थी। आलू खरीदती है, औने-पौने भाव और बेचती है ढाई सौ रुपये किलो 'हाथ से अनछुए'। बाहर से जो आलू पेप्सी ने आयात किए थे, वे भी चिप्स बनाने के लिहाज से किसी भी तरह भारतीय आलुओं के मुकाबले बेहतर नहीं थे।

सरकार को दिए गए प्रस्ताव में पेप्सी फूड्स को दो करोड़ रुपये की लागत से एक कृषि अनुसंधान केन्द्र भी बनाना था जो अधिक उपज देने वाली रोगरोधी किस्में विकसित करता। कंपनी ने आलू के अलावा टमाटर की प्रचलित भारतीय किस्मों को प्रशोधन (प्रोसेसिंग) के उपयुक्त नहीं माना था। इसलिए कंपनी ने यह भी वायदा किया था कि वह बाहर से संकर किस्मों के बीज मंगाकर किसानों में बांटेंगी। यह प्रस्तावित अनुसंधान केन्द्र कभी बना ही नहीं। पंजाब में पेप्सी फूड्स के दो कारखाने जरूर बन गए—एक जहूरा में और दूसरा पटियाला में। भारत में विकसित संकर टमाटर ही इन दोनों फूड प्रोसेसिंग फैक्टरियों में इस्तेमाल किए जा रहे हैं। इसी तरह पेप्सी फूड्स की ही एक शखा है ''केटुकी फ्राइड चिकन'' (के.एफ.सी.)। इसने भी कृषि और मुर्गी अनुसंधान को बढ़ावा देने के बहाने भारत में प्रवेश किया, क्योंकि उसकी नजर में भारत के मुर्गे-मुर्गियां प्रोसेसिंग के काबिल नहीं थे। आज यही के. एफ. सी. अनुसंधान को बढ़ावा देने का इरादा छोड़कर भारतीय नस्लों को पकाकर बेच रही है।

कार्गिल कंपनी ने भी बड़े भारी-भारी वायदे किए, जिन्हें बाद में निभा नहीं पायी। इसने सूरजमुखी की संकर किस्म के बीच बड़ी भारी ऊपज का वायदा करके बेचे, जबकि किसानों ने उगाए तो पैदावार बहुत कम हुई। विशेषज्ञों का कहना है कि यह संकर सूरजमुखी वही थी, जो कि पूर्वी यूरोप में प्रविष्ट की गयी थी और बाद में वहां असफल सिद्ध हुई। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने कार्गिल की संकर सूरजमुखी को किसानों के खेतों पर आजमाने के प्रयोग लगाए थे। कंपनी ने उन्हें पूरा होने से पहले ही रोक दिया। इस तरह ये तमाम कंपनियां व्यापार में झूठ और धोखाधड़ी के सहारे चलती हैं और मारा जाता है भोलाभाला किसान। अक्सर अधिक कमाई के लालच में किसान इनके जाल में फंस जाते हैं और फिर पछताते हैं।

(भूख का असली चेहरा, SADED से साभार)

हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे

शरद जोशी

देश के आर्थिक नन्दन कानन में कैसी क्यारियां पनपी-संवरी हैं भ्रष्टाचार की, दिन-दूनी रात चौगुनी! कितनी डाल, कितने पत्ते, कितने फूल और लुक-छिपकर आती कैसी मदमाती सुगन्ध! यह मिट्टी बड़ी उर्वरा है, शस्य श्यामल, काले करमों के लिए। दफ्तर दफ्तर नर्सरियां हैं और बड़े बाग जिनके निगहबान बाबू, सुपरिनटेंडेंट, डायरेक्टर। सचिव, मंत्री। जिम्मेवार पदों पर बैठे जिम्मेदार लोग, क्या कहने, आई. ए. एस., एम. ए., विदेश रिटर्न, आजादी के आंदोलन में जेल जाने वाले, चरखे के कतैया, गांधीजी के चेले, बयालीस के जुलूस वीर, मुल्क का झंडा अपने हाथ से ऊपर चढ़ाने वाले, जनता के अपने, भारत मां के लाल, काल अंग्रेजन के, कैसा खा रहे हें रिश्वत गप-गप! ठाठ हो गये सुसरी आजादी मिलने के बाद। खूब फूटा है पौधा सारे देश में, पनप रहा केसर क्यारियों से कन्याकुमारी तक, राजधानियों में, जिला दफ्तर, तहसील, बी. डी. ओ., पटवारी के घर तक, खूब मिलता है काले पैसे का कल्पवृक्ष, पी. डब्ल्यू. डी., आर. टी. ओ., चुंगी नाके, बीज गोदाम से मुंसीपाल्टी तक। सब जगह अपनी-अपनी किस्मत के टेंडर खुलते हैं, रुपया बंटता है ऊपर से नीचे, आजू-बाजू। मनुष्य-मनुष्य के काम आ रहा है, खा रहे हैं तो काम भी तो बना रहे हैं। कैसा नियमित मिलन है, बिलैती खुलती है, कलैजी की प्लेट मंगवाई जाती है। साला कौन कहता है राष्ट्र में एकता नहीं, सभी जुटे हैं, खा रहे हैं, कुतर-कुतर पंचवर्षीय योजना, विदेश से उधार आया रुपया, प्रोजेक्टों के सूखे पाइपों पर 'फाइव-फाइव-फाइव' पीते बैठे हंस रहे हैं ठेकेदार, इंजीनियर, मंत्री के दौर के लंच-डिनर का मेनू बना रहे विशेषज्ञ। 'स्वास्थ्य मंत्री की बेटी के ब्याह में टेलिविजन बगल में दाब कर लाया है दवाई कंपनी का अदना स्थानीय एजेंट। खूब मलाई कट रही है। हर सब-इन्स्पेक्टर ने प्लॉट कटवा लिया कॉलोनी में। टॉउन प्लानिंग वालों की मुट्ठी गर्म करने से कृषि की सस्ती जमीन डेवलपमेंट में चली जाती है। देश का विकास हो रहा है भाई। आदमी चांद पर पहुंच रहा है। हम शनिवार की रात टॉप फाइव स्टार होटल में नहीं पहुंच सकते, लानत है ऐसे मुल्क पर!

कहां पर नहीं खिल रहे भ्रष्टाचार के फूल! जहां-जहां जाती है सरकार, उसके नियम, कानून, मंत्री, अमला, कारिन्दे साथ होते हैं। जहां-जहां जाती है सूरज की किरन, वहीं-वहीं पनपता है भ्रष्टाचार का पौधा। खूब बांटनी है इसकी बड़ी फैली ज्यॉग्राफी, मोटा इतिहास, निरंतर निजी लाभ का अलजेब्रा, उज्ज्वल भविष्य, भारतीय नेताओं, कर्मचारियों, अफसरों के हाथ में भाग्य रेखा के समानान्तर भ्रष्टाचार की नयी रेखा बन रही है आजकल। पालने में दूध पीता बच्चा सोचता है, आगे चलकर विधायक बनूं या सिविल इंजीनियर, माल कहां ज्यादा कटेगा? पेट में था जब अभिमन्यु, तब रोज रात भ्रष्ट बाप सुनाया करते थे जेवरों से लदी मां को अपने फाइलें दाब रिश्वत खाने के कारनामे। सुनता रहता था कोख में अभिमन्यु। कितना अच्छा है ना! संचालनालय, सचिवालय के चक्रव्यूह में भतीजों को मदद करते हैं चाचा। लो बेटा, हम खाते हैं, तुम भी खाओ। मैं भी इस चक्रव्यूह में जाऊंगा मां, आइस्क्रीम खाते हुए कहता है बारह वर्ष का बालक। मां लाड़ से गले लगा लेती है, कान्वेंट, मिरांडा में पढ़ी, सुघड़ अंग्रेजी बोलने वाली मां गले लगा लेती है होनहार बेटे को।

मंत्रिमंडलों में बिराजते हैं भ्रष्टाचार के महाप्रभु, सबके सिर पर स्नेह का अदृश्य हाथ फेरते हुए। चिन्ता न करो भाई। 'हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे।' चारों तरफ लगता है हरा-भरा देश, विकास ग्रांट, दौरे, भाषण, स्वागत। कुलांचे भरते हैं यहां से वहां। आंगन में खेलते हैं ठुमक-ठुमक चमचे, लाइसेंस के उम्मीदवार, पुराने यार आंदोलन के जमाने के। मधुर मुस्कान लिए देखते हैं मंत्री महोदय अपनी उपजाति के नवयुवकों को। भाई, जानता हूं तुम्हारे लिए भी कुछ करना है। फोन लगाओ फलां को, मैं बात करूंगा, शायद तुम्हारे लिए कोई अच्छी जगह निकल आये उसके कारखाने में। हलो, हांजी, हलो। हांजी, अवश्य, अवश्य, आपकी जैसी आज्ञा!

गूंजती है स्वर लहरी सारे देश में। तार जुड़ा है आपस में, यहां से वहां तक। पतली-पतली गलियों से बढ़ रहे हैं दबे-पांव लोग। फैल रहे हैं चूहे, सपनों के गोदाम में कुतर गये इरादे इस देश के। उपसमितियां, आयोग, जांच, बयान, पटल पर रखी सड़ रही वास्तविकताएं। अखबारों से निरन्तर आती है काले कारनामों की गंध। अर्थशास्त्र और राजनीति में भ्रष्टाचार का पाल्यूशन। सफाइयां पेश करते हैं मुख्यमंत्री अपने मंत्रियों की और मंत्री अपने अफसरों की और अफसर बाबुओं की। हल्की-हल्की गुर्राहट, खुसफुसाहट, वादे, बोतल समाप्त होने के उपरान्त के भावुक स्वर। कल जरूर कर देने के इरादे। अपढ़ मां के अंग्रेजी छांटते पूत, दवाई न मिलने पर मर गये बाप के लखपति बेटे अंधेरे बार के कोने में कन्या से चहचहाते।

पूरी धरती पर छा गये काले व्यवसाय के बादल। भ्रष्ट अफसर खरीदता है खेत यानी फार्म, जिसे जुतवाता है कृषि विभाग का असिस्टेंट, ट्रैक्टर कंपनी के एजेंट से कहकर, जहां लगता है मुफ्त पम्प और प्यासी धरती पीती है रिश्वतों का पानी, देती है गेहूं जो बिकता है काले बाजार में। सारे सागर की मसी करें और सारी जमीन का कागज फिर भी भ्रष्टाचार का भारतीय महाकाव्य अलिखित ही रहेगा। कैसा प्रसन्न बैठी है काली लछमी प्रशासन के फाइलों वाले कमलपत्र पर। उद्योगों के हाथी डुला रहे हैं चंवर। चरणों में झुके हैं दुकानदार, ठेकेदार, सरकार को माल सप्लाई करने वाले नम्र, मधुर सज्जन लोग। पहली सतह जो हो, दूसरी सतह सुनहरी है। बाथरूप में सोना दाब विदेशी साबुन से देशी मैल छुड़ाते सम्भ्रान्त लोग राय रखते हैं खास पॉलिटिक्स में, बहुत खुल कर बात करते हैं पक्ष और प्रतिपक्ष से। जनाब जब तक गौरमेंट कड़ा कदम नहीं उठाती, कुछ नहीं होगा। देख नहीं रहे करप्शन कितना बढ़ रहा है। आप कुछ लेंगे, शैम्पेन वगैरह! प्लीज तकल्लुफ नहीं, नो फॉर्मेलिटी।

देखिए, जहां तक करप्शन का सवाल है, कहां नहीं है। सभी देशों में है। भारत में तो काफी कम है। फिर सवाल यह है कि महंगाई कितनी बढ़ रही है! बेचारा मिडिल क्लास कहां जाये? तनख्वाह से तो गुजारा होता नहीं। मैं बीयर लूंगा।

आप ठीक कह रहे हैं वैरा, दो बीयर। और सुनाइए कब सबमिट कर रहे हैं प्रोजेक्ट रिपोर्ट। हम बेसब्री से इन्तजार कर रहे हैं। हें-हें...यह आजकल जो नयी केब्रे गर्ल आयी है, बड़ी दुबली है।

प्रगति कर रहा है देश। मरकरी के नीचे पावडर लगाती सज रही हैं पार्टी के लिए बहुएं, टाई कसते हुए सीटी बजा रहा है ऊंचे दहेज में मिला भ्रष्ट अफसर आई. ए. एस. दूल्हा। चीनी लड़कियों से बाल सेट करवा रही है कुलवधु, कालगर्ल के एजेंट से समय तय कर रहा है कॉरिडॉर में पत्नी की प्रतीक्षा करता कम्पनी का सुसंस्कृत पब्लिक रिलेशन अफसर। राशन और साबुन की क्यू में खड़े लोग रेडियो की दुकान से आता संगीत सुनते भीगते रहते हैं। रोज खुल जाते हैं दफ्तर, शो केस, रोज अपनी जरूरतों को कम करता जाता है साधारण आदमी। वही क्यू, वही मिलावट, वही भाषण!

झोंपड़पट्टी के बाहर खेलते रहते हैं गंदे काले बच्चे। इम्पाला में रविशंकर का लेटेस्ट एल. पी. खरीदकर लौटती हुई औरत सोचती है, ये लोग अपने बच्चों को स्कूल क्यूं नहीं भेजते? रेल के बाहर खिड़कियों में हाथ फैला रोटी, बची हुई सब्जी या पांच-दस पैसा मांगते हैं, गंदे घिनौने भिखारी। एयरकंडीशन कार में अपने टोस्ट पर मक्खन लगाता रेलवे केटरिंग को नापसंद करता वह शरीफ आदमी आमलेट खाते सहयात्री से पूछता है राष्ट्रीय प्रश्न—ये लोग भीख क्यूं मांगते हैं? कोई मेहनत-मजदूरी क्यों नहीं करते? हर विषय में खास राय रखते हैं सभ्य जन। पॉलिटिक्स में दो टूक बात करते हैं सलाद पर नमक छिड़कते हुए। रिजर्व बैंक की पॉलिसी का विवेचन करते हुए क्लब के सम्भ्रान्त सदस्य कनखियों से नापते रहते हैं दूसरे की पत्नी की कमर। खूब मंजा है इस देश में। कितना रंगीन और खुशबूदार है प्रगति का चित्र। नासिक और देवास के कारखाने छापते रहते हैं नोट। पेरिस, लन्दन, न्यूयार्क से रिसती रहती है विदेशी सहायता। खेलता है डनलपपिलो पर लेटा बालक हांगकांग का खिलौना, रोजेज लगवाती है नये माली से मैडम खुद खड़ी हो गार्डन में, अन्दर साहब युवा आया को इशारे से स्टडीरूम में बुलाता है। आगे बढ़ रहा है सुसंस्कृत देश। भ्रष्टाचार के नल, नाली, चहबच्चे, तालाब, नदी, सींच रहे हैं राष्ट्र का नया व्यक्तित्व। देश की आत्मा चुपके से खा रही है स्मगल की ऑस्ट्रेलियन पनीर और घिघिया कर देखती है काले धन से उठे समन्दर किनारे के आकाश छूते भवन! प्रगति कर रहा है देश। जीभ लपलपा कर इधर-उधर देख रहे हैं लोग। सबको अपना जीवन छोटा लगने लगा है। कहीं से जमे डोल। सेमिनार में जनसंख्या और गरीबी के सवाल पर आंकड़ों से लदा अंग्रेजी में लेख पढ़ होटल के कमरे में लौटता है विदेश से लौटा बुद्धिजीवी। दरवाजा खोल बैरा धीरे-से पूछता है, साहब शौक करते हैं क्या? लाऊं, दो नयी आयी हैं। नेपालन या आप जो पसन्द करें। कितनी साफ बात कही थी उसने जनसंख्या के सवाल पर, खुद उपमंत्री चाय के वक्त प्रशंसा कर रहे थे।

उज्ज्वल है देश का भविष्य। कौन कहता है, हम प्रगति नहीं कर रहे, आगे नहीं बढ़ रहे हर क्षेत्र में! प्रतिभा की कमी नहीं इस देश में। हमारी समस्या है, विकास के लिए पर्याप्त धन का अभाव। इसी कारण हमारी योजनाएं पूरी नहीं हो पा रहीं। यदि थोड़े धन की व्यवस्था हम जुटा लें, तो बहुत तेजी से अन्य मुल्कों के बराबर आ सकते हैं।

ठीक कह रहे हैं आप। मेरे खयाल से अब खाने का आर्डर दे दिया जाये। वॉट वुड यू लाइक टू हैव? चिकन!

(हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे, भारतीय ज्ञानपीठ से साभार)

पृष्ठ 3 का शेष

लोकविद्या जीवनयापन कानून

जाति, क्षेत्र और भाषा के नाम पर बड़ी गैर-बराबरी और भेदभाव है। वर्तमान नीतियों के चलते यह व्यवस्था लोगों की रचनात्मक क्षमता को खत्म कर रही है और उन्हें मजदूरी करने के लिए बाध्य करती हैं

विकास की दिशा बदलने और मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए और प्रकृति के शोषण को रोकने के लिए लोकविद्या जीवनयापन कानून पेश किया जाना चाहिए। इस कानून के तहत—

1. छोटी सिंचाई तालाब की व्यवस्था का पुनर्निर्माण।
2. छोटे व कुटीर उद्योग को प्रोत्साहन व सब्सिडी की व्यवस्था।
3. अंग्रेजी पढ़े और लोकविद्या के स्वामी लोगों के बीच आमदनी के अंतर को खत्म किया/घटाया जाय। लोकविद्या से बनी वस्तुओं को बाजार उपलब्ध हो और राज्य द्वारा उन्हें लाभकारी मूल्य दिया जाय।
4. लोकविद्या के ज्ञान को समाज में प्रतिष्ठा मिले।
5. नियम, कानून व दिशा-निर्देश सभी स्थानीय भाषाओं में हो।
6. स्थानीय शिल्प व सूती कपड़े के इस्तेमाल को अनिवार्य बनाया जाय। ऐसा करने वालों को रोजगार में प्राथमिकता दी जाये।

•

ज्ञानी

अजय, सिंगरौली

तुम ज्ञानी, हम अज्ञानी हुए कैसे
भेद यह आया, कब और कहां से
पढ़े तुम स्कूलों, विश्वविद्यालयों में जाके
हम भी पढ़े हैं धरती की गोद में।

हवाओं से, जंगल से, नदियों समंदर से
बादल से, बरखा से, आंधी तूफानों से
तारों से चंदा से, भोर की किरनों से
भौरों के गानों से, कोयल की तानों से
कलियों से फूलों से, इठलाती बेलों से
खेत खलिहानों से, पुरखों-सियानों से।

आगे बढ़ाया है, जो कुछ भी पाया है
ज्ञान की गंगा को निर्झर बहाया है
इन्द्रजाल तुमने जिस ज्ञान से रचाया है
धरती पर नित नये संकट वह लाया है
कितने ही जीवों का हो चुका सफाया है
सर्वनाश का संकट सिर पर मंडराया है।

हमने तो पकड़ी सहजीवन की राय
थोड़े में खुश, न कि ज्यादा की चाह
खेती किसानी, पशुपालन, बागवानी
नाना विध शिल्प कलाओं के हम ज्ञानी।

मूल्यहीन ज्ञान हमारा बतलाते हो
छीन संसाधन, हमें दर दर भटकाते हो
शोषण, अन्याय को विकास कहे जाते हो।
धरती मां सबकी, हक सबका बराबर
करेंगे विकास अपने हुनर के दम पर
भोर की उजास छा रही है क्षितिज पर।।

•

लोकविद्याधर समाज के चार बड़े दुःख

1. **लोकविद्या यानि उनके ज्ञान को ज्ञान ही नहीं माना जाता।**
2. **आज का बाजार उनके श्रम और ज्ञान का जायज मूल्य नहीं देता।**
3. **राष्ट्रीय संसाधनों जैसे बिजली, पानी, शिक्षा, वित्त आदि का सबसे छोटा हिस्सा इन्हें दिया जाता है।**
4. **इन्हें इनके जीवन यापन के कार्यों, संसाधनों और रहने के स्थानों से लगातार विस्थापित किया जा रहा है।**

बुक पोस्ट

लोकविद्या पंचायत, मासिक समाचार पत्र, विद्या आश्रम (सा 10/82 ए, अशोक मार्ग, सारनाथ, वाराणसी-221007) की ओर से **डा.चित्रा सहस्त्रबुद्धे** द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित।
website : vidyaashram.org **Blog :** lokavidyapanchayat.blogspot.com , lokavidyajanandolan.blogspot.com **e-mail :** vidyaashram@gmail.com **Phone :** +91-9838944822
प्रेस : **सत्तनाम प्रिण्टर्स**, एस-1/208 के-1, नई बस्ती, पाण्डेयपुर, सारनाथ रोड, वाराणसी-221002